RNI No. 7127/60

डाक पंजीयन संख्या - Jaipur City / 411 2023-25

संघशक्ति

मासिक समाचार पत्रिका

वर्ष : 60 अंक : 06 प्रकाशन तिथि : 25 मई कुल पृष्ठ : 36 प्रेषण तिथि : 4 जून, 2023

शुल्क एक प्रति : 15/- वार्षिक : 150/- रुपये पंचवर्षीय 700/- रुपये दस वर्षीय 1300/- रुपये

स्वामीभक्तराजराणा झाला मान (बीदाजी)

जन्मः- 15 मई, 1542 ई. (ज्येष्ठ शुक्ल द्वितीया सोमवार, वि. सं. 1599)

आत्मोत्सर्गः- 18 जून, 1576 ई. (ज्येष्ठ (शुद्ध) शुक्ल सप्तमी सोमवार, वि. सं. 1633)

बैरी से बदला लेने जो हँस हँस शीश चढ़ाते

शीश कटे धड़ से अलबेले बढ़ बढ़ दाँव लगाते, मरकर जीते जाते ।।

महाराणा प्रताप
की जयंती पर कोटि-कोटि नमन

IAS / RAS
तैयारी करने का राजस्थान का सर्वश्रेष्ठ संस्थान

स्प्रिंग बोर्ड
Spring Board

Springboard Academy,
Main Riddi Siddi Choraha,
Opposite Bank of Baroda,
Gopalpura, Bypass Jaipur

Website : www.springboardindia.org

संघशक्ति

4 जून, 2023

वर्ष : 60 अंक : 06

-: सम्पादक :-

लक्ष्मणसिंह बेण्यांकाबास

शुल्क - एक प्रति : 15/- रुपये, वार्षिक : 150/- रुपये, पंचवर्षीय : 700/- रुपये, दस वर्षीय : 1300/- रुपये

विषय - सूची

☞ समाचार संक्षेप	✍	04
☞ चलता रहे मेरा संघ	✍ श्री भगवानसिंह रोलसाहबसर	07
☞ पूज्य श्री तनसिंहजी (के सम्बन्ध में)	✍ श्री चैनसिंह बैठवास	08
☞ मानव जीवन का लक्ष्य	✍ स्वामी रामसुखदास जी	11
☞ महान क्रान्तिकारी राव गोपालसिंह खरवा	✍ श्री भँवरसिंह मांडासी	15
☞ क्रांतिकारी डूंगजी-जवारजी	✍ डॉ. मातुसिंह मानपुरा	18
☞ अतुलनीय त्याग	✍ स्व. श्री शम्भुसिंह राजावत	21
☞ आदर्श और अनूठे गाँव	✍ कर्नल हिम्मतसिंह	25
☞ दाता ने कहा था	✍ श्री औंकारसिंह 'सात्यकि'	28
☞ भारतीय संस्कृति और सदाचार	✍ श्री अरुण कुमार	32
☞ अपनी बात	✍	34

समाचार संक्षेप

- क्षत्रिय इकोनोमिक फोरम की एक दिवसीय कार्यशाला दिल्ली स्थित होटल अशोक में 8 अप्रेल को सम्पन्न हुई। क्षात्र पुरुषार्थ फाउण्डेशन के प्रकल्प क्षत्रिय इकोनोमिक फोरम की इस कार्यशाला को सम्बोधित करते हुए संघ के संरक्षक माननीय भगवानसिंहजी ने कहा कि नि:स्वार्थ भाव से सेवा करने के साथ ही सेवा के हेतु को समझना भी जरूरी होता है। शिक्षा को जीवन में उतारने के लिये अनुशासन की आवश्यकता है और श्री क्षत्रिय युवक संघ इसी अनुशासन का पाठ पढाता है। संघ भक्ति, ज्ञान व कर्म की त्रिवेणी है। उन्होंने उद्यमियों से अनुरोध किया कि अपने व्यापार-उद्योग को बढावें और क्षेत्र के विशेषज्ञों की बातों का अनुसरण करें। केन्द्रीय जलशक्ति मंत्री गजेन्द्रसिंह ने इसको और विस्तार देने की आवश्यकता बताई। नवाचारों के साथ आगे बढते हुए आने वाली पीढी के लिये आदर्श स्थापित करें।
- माननीय संरक्षक श्री के सान्निध्य में 9 अप्रेल को प्रात: 10 बजे फरीदाबाद के सेक्टर 8 में स्थित महाराणा प्रताप भवन में स्नेह-मिलन कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। वहाँ की अनेक संस्थाओं के प्रतिनिधियों सहित अनेक समाज बन्धु कार्यक्रम में उपस्थित रहे।

  9 अप्रेल को ही दोपहर बाद दिल्ली छावनी क्षेत्र में अशोक बारात घर में आयोजित स्नेह मिलन कार्यक्रम में भी माननीय संरक्षक श्री का सान्निध्य प्राप्त हुआ। दिल्ली एनसीआर में रहने वाले स्वयंसेवक व समाजबन्धु परिवार सहित तथा पूर्वांचल क्षेत्र के समाज बन्धु इस कार्यक्रम में सम्मिलित हुए।
- बाड़मेर स्थित आलोक आरम में 16 अप्रेल को क्षत्रिय शिक्षक स्नेह मिलन में भी माननीय संरक्षक श्री का सान्निध्य प्राप्त हुआ। सम्मेलन में अनेक विषयों पर शिक्षकों ने अपने विचार व्यक्त किए।

संघप्रमुखश्री का दक्षिण भारत का प्रवास :

संघप्रमुखश्री ने अपने दक्षिण भारत के प्रवास में अनेक स्थानों पर कार्यक्रमों को संबोधित किया। इन कार्यक्रमों में उपस्थित लोगों का उत्साह अद्‌भुत था। कार्यक्रमों में राजस्थान के प्रवासियों के अलावा स्थानीय लोगों में भी उत्साह देखा गया। वापी के साणोद स्थित राजस्थान भवन में 9 अप्रेल को स्नेह-मिलन समारोह से यात्रा प्रारम्भ हुई। 10 अप्रेल को अहमदनगर में सरदार पटेल वाडी में स्नेह मिलन कार्यक्रम का आयोजन रहा। उसी दिन शाम को पुणे पहुँचकर अंकुशराव नाट्य गृह में आयोजित स्नेह-मिलन को सम्बोधित किया। 11 अप्रेल को संघप्रमुखश्री के सान्निध्य में सतारा के दुर्गा माता मंदिर में स्नेह-मिलन कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। उसी दिन कोल्हापुर स्थित दुर्गा माता मन्दिर में आयोजित स्नेह-मिलन कार्यक्रम में संघप्रमुखश्री पहुँचे। 12 अप्रेल को संघप्रमुखश्री हुबली पहुँचे। यहाँ रामदेव मंदिर में कार्यक्रम आयोजित हुआ। शाम को संघप्रमुखश्री के सान्निध्य में शिमोगा में बैठक आयोजित हुई। अपने इस प्रवास में 13 अप्रेल को संघप्रमुखश्री बेंगलुरु पहुँचे यहाँ के राणासिंह पेट स्थित चामुण्डा माता मंदिर में कार्यक्रम आयोजित हुआ। उसी दिन चित्रदुर्गा स्थित अल्लामा प्रभु सभा भवन, मुरधामठ में भी स्नेह मिलन कार्यक्रम रखा गया। 14 अप्रेल को चेन्नई स्थित राजस्थान राजपूत सभा भवन में आयोजित कार्यक्रम में संघप्रमुखश्री का सान्निध्य प्राप्त हुआ। 15 अप्रेल को विजयवाड़ा स्थित बाबा रामदेव मंदिर में आयोजित कार्यक्रम को संघप्रमुखश्री ने सम्बोधित किया। 16 अप्रेल को हैदराबाद स्थित महाराणा प्रताप हाल अंबरपेट में संघप्रमुखश्री के सान्निध्य में कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। सभी कार्यक्रमों में श्री क्षत्रिय युवक संघ की विचारधारा को समझाया गया। सभी जगह पर पूज्य तनसिंहजी के जन्म

शताब्दी वर्ष के कार्यक्रम की चर्चा की गई तथा होने वाले इस कार्यक्रम में सम्मिलित होने का निमंत्रण भी दिया गया।

शिविर :

- ❖ हरयाणा के चरखी दादरी क्षेत्र के बोन्द गाँव में 30 मार्च से 22 अप्रेल तक एक प्राथमिक प्रशिक्षण शिविर सम्पन्न हुआ। इस शिविर में रोहतक, भिवानी, हिसार, सिरसा क्षेत्र के गाँवों से शिविरार्थी पहुँचे।
- ❖ 13 से 16 अप्रेल तक एक प्राथमिक प्रशिक्षण शिविर भटवाड़ा खुर्द में रघुकुल फार्म हाउस परिसर में सम्पन्न हुआ। चित्तौड़, भीलवाड़ा, उदयपुर, राजसमंद और अजमेर जिलों के 140 युवाओं ने शिविर में प्रशिक्षण प्राप्त किया।
- ❖ 13 से 19 अप्रेल तक सीकर जिले के त्रिलोकपुरा में एक माध्यमिक प्रशिक्षण शिविर आयोजित हुआ। शिविर में सीकर, नागौर, बीकानेर, डूंगरपुर, बांसवाड़ा व जोधपुर आदि जिलों से 100 स्वयंसेवक प्रशिक्षण हेतु पहुँचे।
- ❖ 4 से 10 मई तक जैसलमेर जिले के बरणा में माध्यमिक प्रशिक्षण शिविर का आयोजन हुआ।

अन्य कार्यक्रम :

- ❖ 7 अप्रेल को जायल विधान सभा क्षेत्र की बैठक का आयोजन श्री प्रताप फाउण्डेशन के तत्वावधान में सम्पन्न हुआ। प्रताप फाउण्डेशन की आज की परिस्थिति में आवश्यकता तथा किसान सम्मेलनों की भूमिका समझाई गई।
- ❖ प्रताप युवाशक्ति द्वारा सूचना प्रौद्योगिकी सेमीनार का आयोजन 9 अप्रेल को जयपुर स्थित संघशक्ति कार्यालय में किया गया। इस क्षेत्र में अध्ययनरत विद्यार्थियों को कैरियर एवं रोजगार सम्बन्धी मार्गदर्शन दिया गया। प्रौद्योगिकी के विभिन्न आयामों पर चर्चा की गई।
- ❖ पाली जिले की एक दिवसीय जनप्रतिनिधि कार्यशाला 15 अप्रेल को पाली शहर स्थित झाला-उपवन में सम्पन्न हुई। प्रताप फाउण्डेशन के तत्वावधान में आयोजित इस कार्यशाला में जिले के हर भाग से प्रतिनिधि उपस्थित थे। लोकतंत्र की श्रेष्ठता को स्थापित करने के लिये, समाज के दायित्व को निभाने के लिये प्रताप फाउण्डेशन द्वारा किए जाने वाले कार्यों की सूचना दी गई। कार्ययोजना बनाकर विधानसभा तथा पंचायत समिति क्षेत्रों में ऐसी कार्यशाला सम्पन्न करवाने हेतु जिम्मेवारियाँ ली गई।
- ❖ जालोर में 16 अप्रेल को आयोजित किसान सम्मेलन में जालोर व सिरोही जिले के किसान बड़ी संख्या में पहुँचे। लोकतंत्र अच्छी शासन प्रणाली मानी जाती है पर भारत में वैसा रूप प्रकट नहीं हो पाया है। इसके लिये कृषि वर्ग से जुड़े लोग यदि अपने दायित्वबोध को जागृत कर सक्रिय हो जाएँ तो इसमें राष्ट्र और राष्ट्र के नागरिकों का लाभ होगा। इस दायित्वबोध को समझें, जागृत करें और सबका भला करें। किसानों की आम समस्या और क्षेत्र विशेष की समस्याओं सम्बन्धी ज्ञापन भी जिलाधीश महोदय तक पहुँचाया गया।
- ❖ 23 अप्रेल को सिरोही जिले के रेवदर क्षेत्र के दत्ताणी गाँव में श्री क्षात्रपुरुषार्थ फाउण्डेशन की कार्य विस्तार बैठक में तहसील स्तरीय कार्ययोजना बनाई गई। 22 अप्रेल को ही जावाल कस्बे में व्यापारियों की एक बैठक रखी गई जिसमें समाज के व्यापारियों में परस्पर सहयोग व समन्वय विकसित करने सम्बन्धी चर्चा की गई।
- ❖ श्री क्षत्रिय युवक संघ के संस्थापक पूज्य तनसिंहजी के जन्म शताब्दी वर्ष के अन्तर्गत होते जा रहे विभिन्न कार्यक्रमों की शृंखला में ही स्थानीय स्तर पर छोटे-छोटे कार्यक्रम भी अनेक स्थानों पर सम्पन्न हो रहे हैं। 1 अप्रेल को कुचामन स्थित साधना संगम

संस्थान के तत्वावधान में रूपपुरा में पूज्यश्री का जन्म शताब्दी कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। 2 अप्रेल को रविवारीय विशेष शाखा का आयोजन भटवाड़ा खुर्द में रखा गया। 2 अप्रेल को ही लाडनू मण्डल के छप्पारा, सांवराद व बिठुड़ा गाँवों में कार्यक्रम रखे गये। 2 अप्रेल को ही मूलाना (जैसलमेर) व सिरोही जिले में मकावल में भी कार्यक्रम रहे। 3 अप्रेल को डीडवाना क्षेत्र के चक खाटड़िया, ठाकरियावास व दूदोली में कार्यक्रम रहे। 4 अप्रेल को गुजरात के खोडियार प्रान्त के उंडवी गाँव में, 9 अप्रेल को कपासन मंडल की जगपुरा शाखा में, उसी दिन चारभुजा छात्रावास मेड़ता सिटी, छापरी, ददवाड़ा, भाटियों की ढाणी, पांचला सिद्धा तथा देऊ में बैठकें आयोजित हुई।

महाराणा सांगा की 541वीं जयन्ती उदयपुर स्थित भूपाल नोबल्स संस्थान में समारोह पूर्वक बनाई गई। बड़ी संख्या में उपस्थित जन समूह को महाराणा सांगा के जीवन पर विस्तार से जानकारी दी गई तथा पूज्यश्री के जन्म शताब्दी वर्ष की सूचना भी दी गई। मूलाना (जैसलमेर) के हर सिद्धि मंदिर में 13, 18 व 25 अप्रेल को पूज्यश्री के जन्म शताब्दी वर्ष हेतु यज्ञ सम्पन्न हुए। 15 अप्रेल को जोधपुर स्थित तनायन कार्यालय में स्नेह मिलन का आयोजन हुआ। शिविरों तथा जन्म शताब्दी वर्ष की चर्चा की गई। 16 अप्रेल को घाटोल तहसील के करगचिया गाँव में जन्म शताब्दी वर्ष हेतु कार्यक्रम रहा। उसी दिन देवदा गाँव में कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। 16 अप्रेल को भैंसाणा (उत्तर गुजरात संभाग) में यज्ञ के साथ प्रारम्भ कार्यक्रम में कई प्रान्तों के स्वयंसेवक उपस्थित रहे। 17 अप्रेल को भावनगर प्रान्त के देवरिया, रंघोला, मोटा उमरड़ा और माँडवा गाँवों की यात्रा वरिष्ठ स्वयंसेवक बलवंतसिंह जी पांची के साथ की गई जिसमें श्री क्षत्रिय युवक संघ तथा पूज्यश्री के जन्म शताब्दी वर्ष की जानकारी दी गई। 23 अप्रेल को आसपुर मंडल के वालाई में विशेष कार्यक्रम रहा।

30 अप्रेल को गांधीनगर (गुजरात) में स्नेह मिलन का आयोजन संघप्रमुखश्री के सान्निध्य में सम्पन्न हुआ। इस कार्यक्रम हेतु कई दल गठित कर अनेक गाँवों में सम्पर्क साधा गया। प्रत्येक गाँव में संघ की बात पहुँची तथा जन्म शताब्दी वर्ष की सूचना भी मिली।

●

''मैं'' का ताला

एक साधु किसी गाँव से गुजर रहा था। उसका एक मित्र साधु उस गाँव में रहता था। उसने सोचा, चलो उससे मिलता चलूँ। रात आधी हो रही थी। फिर भी वह उससे मिलने गया। एक बन्द खिड़की से प्रकाश आते देखकर उसने दरवाजा खटखटाया। भीतर से आवाज आई, ''कौन है?''

उसने यह सोचकर कि वह आवाज से पहचान लिया जाएगा, कहा-''मैं हूँ।''

इसके बाद भीतर से कोई उत्तर नहीं आया। उसने बार-बार दरवाजा खटखटाया, पर भीतर से कोई नहीं बोला। उसे ऐसा लगा, जैसे यह घर बिल्कुल सूना है। उसने जोर से कहा, ''मेरे लिए तुम दरवाजा क्यों नहीं खोल रहे हो? चुप क्यों हो गये?''

भीतर से आवाज आई-''तुम कौन ना समझ हो, जो अपने को ''मैं'' कहते हो? ''मैं'' कहने का अधिकार सिवाय परमात्मा के और किसी को नहीं है।''

प्रभु के द्वार पर ''मैं'' का ताला लगा हुआ है। जो उसे तोड़ देते हैं, वे पाते हैं कि द्वार तो सदा से ही खुले थे।

चलता रहे मेरा संघ

{50 वर्ष से ऊपर की आयु वर्ग की दम्पत्तियों के लिये ऋषिकेश में आयोजित श्री क्षत्रिय युवक संघ के दंपती शिविर में दिनांक 8.3.2003 को माननीय भगवानसिंह जी द्वारा प्रदत्त स्वागत उद्बोधन।}

परमेश्वर की प्रेरणा से प्रेरित और उसी की कृपा से श्री क्षत्रिय युवक संघ के आह्वान पर पवित्र गंगा नदी के किनारे ऋषिकेश जैसे तीर्थ स्थल पर आयोजित इस शिविर में हम सम्मिलित हुए हैं। यहाँ आयोजित तीसरे शिविर का आज पहला दिन है। पू. तनसिंहजी ने परमेश्वर तक पहुँचने के अनेक मार्गों में से समष्टिगत साधना का मार्ग हमको बताया। व्यष्टि से समष्टि और समष्टि से परमेष्टि की यात्रा है। व्यक्ति का जीवन समाज के जीवन के साथ चलता है। व्यक्ति को स्वयं के कल्याण के लिये समाज में से गुजर कर, साथ रहकर, समझकर परमेश्वर की ओर बढना है।

जो व्यक्ति केवल अपने लिये जीता है, अपने लिये कमाता है, उससे श्रेष्ठ व्यक्ति वह है जो दूसरों के कल्याण के लिये जीता है, दूसरों के कल्याण के लिये स्वयं कष्ट भोगता है। दूसरों को सुविधाएँ प्रदान करने हेतु स्वयं दुविधाओं में रहता है। संसार की उपलब्धियों और पदार्थों का अकेला भोग न करके दूसरों को पहुँचाकर बचे हुए में से स्वयं के लिये लेता है। इस प्रकार का कार्य यज्ञ के समान है। वैसा यज्ञ हमको इस शिविर की अवधि में करना है। पू. तनसिंहजी ने समाज चरित्र के इस महत्त्वपूर्ण व्यवहारिक अंग को समझाया है कि मेरी वजह से किसी को कष्ट या असुविधा न हो, ऐसा जीवन हम बनाएँ।

साधना का मार्ग कोई पिकनिक नहीं जिसमें स्वयं इच्छानुसार मजे करने आए हों। यह श्री क्षत्रिय युवक संघ का शिविर है और वह भी पवित्र तीर्थ स्थल पर है अत: यहाँ हमारा जीवन व्यवहार भी संघ और तीर्थ स्थल की पवित्रता के अनुकूल हो। अपने व्यवहार के प्रति सावधानी बनाये रखना ही साधना है। सावधानी हटी और दुर्घटना घटी। इसलिए सावधान बने रहना है।

जो सावधान है, वो ही साधक हैं। जो असावधानी करता रहता है वह कल्याण का मार्ग नहीं पकड़ सकता। समूह में हम-उम्र के लोग परस्पर व्यवहार में असावधानी कर लेते हैं। वे अपनी इच्छाओं और कामनाओं के वशीभूत होकर छिछलेदारी में उलझ जाते हैं। अन्यों की इच्छाओं और कामनाओं का ध्यान न रखें तो व्यवहार में गलती हो जाती है। इसलिए सावधान रहना है, जागृत रहना है अपने व्यवहार के प्रति। आप समझदार हैं, शिविर के इन सात दिनों में अपने व्यवहार को ऐसा बना लें जो अपने से ज्यादा अन्यों की सुविधा का ध्यान रखे तो जीवन में यह भाव उतरकर जीवन सफल बना देगा। इस सामाजिक भाव को धारण करने और जीवन में प्रकट करने में ही अपना और समाज का कल्याण है। पू. तनसिंहजी की और संघ की यही चाह है।

अपने आप पर सदा दृष्टि रखते हुए व्यवहार करेंगे तो अन्यों को किसी को कष्ट नहीं होने देंगे। यही कल्याण का मार्ग है। ईश्वर की कृपा से हमें मनुष्य देह मिली है। इस शिविर में आने का अवसर भी उसी की कृपा से मिला है। इस अवसर को चूक न जाएँ, ऐसी सावधानी से शिविर के ये दिन गुजारें ताकि भूल न हो। कम बोलें, अनावश्यक न बोलें। अकेले न चलें पर अकेले रहें अपने आप पर ध्यान बनाये रखने में। भगवान की प्रेरणा से हम सब यहाँ आए हैं। मैं कृतज्ञ हूँ कि श्री क्षत्रिय युवक संघ की मारफत आपको बुलाने का आह्वान किया और आप आए। यह मेरी प्रसन्नता का कारण है, इसी के लिये आपका कृतज्ञ हूँ। इस ईश्वर प्रदत अवसर पर आपका स्वागत है। ●

गतांक से आगे

पूज्य श्री तनसिंहजी (के सम्बन्ध में)

''जो कुछ देखा, समझा व अनुभव किया''

– चैनसिंह बैठवास

कृतज्ञता एक मानवीय गुण है। किसी के द्वारा किये गये अहसानों को अहसान मानकर उनके प्रति अहसानबद्ध होना ही कृतज्ञता है। किये गये अहसानों के प्रति अपने को ऋणी मानकर, उन अहसानों से उऋण होने का भाव इन्सान की इन्सानियत का द्योतक है। कृतज्ञता केवल व्यक्ति के प्रति ही नहीं, बल्कि किसी समूह, समाज, राष्ट्र, राज्य या राष्ट्र की सरकार के प्रति भी उतनी ही गंभीरता से प्रकट की जानी चाहिए।

सरकार द्वारा संचालित सार्वजनिक सेवाएँ राष्ट्रीय सम्पत्ति होती हैं। राष्ट्र की सम्पत्ति अप्रत्यक्ष रूप से जनता की सम्पत्ति होती है। उन सभी का संचालन जनता द्वारा उन सेवाओं के बदले में चुकाए गये प्रतिफल से ही सम्भव होता है। सरकार द्वारा एक आम नागरिक को मिलने वाली प्रत्येक सुविधा का समुचित प्रतिफल अपना कर्त्तव्य समझकर चुकाना चाहिए जो उसने राष्ट्र से प्राप्त की है।

पूज्य श्री तनसिंहजी के जीवन की एक घटना है, जब उन्होंने बाड़मेर में नई-नई वकालात प्रारम्भ की थी। वकालात सम्बन्धी किसी काम के लिये एक दिन उन्हें बालोतरा जाना पड़ा। बालोतरा से वापस लौटने के लिये वे रेलवे स्टेशन पहुँचे तब तक रेल गाड़ी स्टेशन पर आ गई और उनको टिकट खरीदने का अवसर ही नहीं मिला और वे रेल में बिना टिकट लिए ही चढ गये।

भारतीय रेल भारत की जनता के लिये भारत की सरकार का एक ऐसा उपक्रम है जो आम नागरिक को यात्रा की समुचित सुविधा प्रदान करती है और आम नागरिक का कर्त्तव्य बनता है कि मिलने वाली सुविधा का समुचित प्रतिफल वह चुकाये। पर अनेकों व्यक्ति ऐसे हैं जो अपना कर्त्तव्य पालन न करके बिना टिकट यात्रा करते पाये जाते हैं और पकड़े भी जाते हैं। ऐसे कृतघ्न लोगों की भी कमी नहीं है। जो कृतज्ञ हैं, जिसमें कृतज्ञता का भाव हैं, वह अपने कर्त्तव्य को नहीं भूलता, अपने पर किए गये अहसान को नहीं भूलता, अपने को मिलने वाली सुविधा के प्रति अपने दायित्व को नहीं भूलता। यही इन्सानियत है, यही महापुरुष की पहचान है।

पूज्य श्री तनसिंहजी बिना टिकट रेल में बैठ तो गये, पर वे अपने कर्त्तव्य को नहीं भूले, राष्ट्र से मिली इस रेल सुविधा के प्रति कृतज्ञ थे, अहसानबद्ध थे। वे राष्ट्र द्वारा मिली इस सुविधा का ऋण अपने पर नहीं रखना चाहते थे, अपने को मिली सुविधा का समुचित प्रतिफल चुका कर उऋण होना चाहते थे, इसलिए बाड़मेर रेलवे स्टेशन पर उतरने के बाद वे स्टेशन के द्वार पर रुक गए तो टिकट चैकर ने उन्हें कहा-आप पधारिए। पूज्यश्री ने कहा, जाऊँ कैसे, मेरे पास टिकट नहीं है। टीटी ने कहा-आपसे टिकट कौन माँग रहा है? पूज्यश्री ने कहा कि आपके न माँगने से मेरा अपराध कम नहीं हो जाता, कृपया जुर्माना सहित राशि स्वीकार कीजिए। टिकट की राशि व जुर्माना चुकाकर ही वे द्वार से बाहर निकले।

पूज्यश्री के जीवन की एक ओर घटना का यहाँ वर्णन किया जा रहा है। अपने विद्यार्थी जीवन में पूज्यश्री तनसिंहजी ने आर्थिक तंगाई को झेला है, उन्होंने दैन्यता को बड़ी निकटता से देखा है। अर्थ के अभाव में कई विद्यार्थियों की पढाई छूट जाया करती है, पूज्यश्री

तनसिंहजी उन विद्यार्थियों में से नहीं थे, जो हताश होकर बैठ जाए, निढाल हो जाए। पिलानी में पढते समय पूज्यश्री ने आर्थिक तंगाई क्या होती है-उसे निकटता से देखा, उसका निकटता से अनुभव किया। छात्रावास में रहते रसोइये के खर्च से चलाया जाने वाला मैस उनके लिये महँगा था, इसलिए वे हाथ से रोटी बनाते थे, फिर भी पैसों की कमी बनी रहती थी। पैसे के अभाव को उन्होंने न तो अपनी और न अपने जैसे साथियों की पढाई में व्यवधान बनने दिया। उन्होंने अर्थ अर्जन के लिये कड़ी मेहनत करने का मानस बनाया। उन्होंने अपना और अपने साथियों का खर्च चलाने के लिये बिड़ला जी के वाचनालय में नौकरी की। सुबह जल्दी उठकर दातुन लाकर अमीर सहपाठियों को बेचे, छात्रावास की खाली पड़ी भूमि में खेती के लिये चौदह क्यारियाँ ली और उनमें साग-सब्जी उगाकर उन्हें बेचा, फिर भी अपनी और अपने साथियों की आवश्यकता को पूरा करने में पैसों की कमी को महसूस करते रहे। परीक्षा निकट थी, पर परीक्षा की फीस भरने को पैसे नहीं थे। सोचा संस्था के मालिक बिड़ला जी से सहायता माँगी जाए लेकिन उसके लिये छात्रावास के संचालक के माध्यम से सेठजी को मिन्नतों एवं प्रशंसा भरा पत्र लिखा जाने पर उन्हें 5-10 रुपए की सहायता मिल जाती थी, उससे अधिक नहीं, लेकिन पूज्यश्री को इससे अधिक रुपयों की आवश्यकता थी। उन्होंने संचालक को माध्यम बनाए बिना सेठजी बिड़ला जी के नाम सीधा पत्र लिखा एवं उसमें साधारण शब्दों में 60 रुपए उधार देने की माँग की जिन्हें कमाने लायक होने पर वापिस लौटाने का वादा किया। सेठ बिड़लाजी ने पूज्यश्री तनसिंहजी की सीधी सादी भाषा एवं वापिस लौटाने की साहूकारी बात से प्रभावित होकर मुनीमों को 60 रुपये देने का आदेश भिजवाया। पूज्यश्री तनसिंहजी ने 15 वर्षों बाद वे 60 रुपये मनीआर्डर द्वारा धन्यवाद सहित सेठ बिड़लाजी को अदा कर दिए। बिड़ला जी के इस अहसान के बदले वे (पूज्यश्री) कृतज्ञ थे। उनका बिड़लाजी के प्रति ही नहीं, हर एक के प्रति साहूकारी पूर्ण व्यवहार पूरे जीवन में बना रहा। उनका कहना था कि यदि मुझे किसी ने एक गिलास पानी भी पिलाया है तो मुझे उसके प्रति कृतज्ञ रहना चाहिए।

पूज्यश्री तनसिंहजी के जीवन में अनेकों लोगों का आवागमन हुआ। जो भी पूज्य श्री के जीवन में आया, उन्होंने उन्हें हथेलियों पर सुलाया, कलियों की भाँति झड़कर उन्हें पनपाया, आंसुओं को पीकर उनकी खुशी के नशे में पागल बने, उन्हें अपने हृदय-मन्दिर में ही नहीं बिठाया, अपने हर साथी के हृदय को शिवालय बनाकर उसमें उनका अभिषेक किया, पर उनमें कुछ ऐसे लोग भी थे जो मतलबी थे। वे अपनी स्वार्थपूर्ति के लिये आए थे। जब उनका मतलब यहाँ पूरा होता नहीं दिखा, तो वे यहाँ से खिसक गये और खड़े हो गये। ऐसे लोगों के सम्बन्ध में पूज्यश्री के सहयोगियों ने पूज्यश्री को जो कहा-पूज्यश्री की ही जुबानी से -

''कुछ लोग मुझे यह भी कहते हैं कि मुझे किसी की परवाह नहीं करनी चाहिए। कोई आओ, चाहे कोई जाओ, स्थितप्रज्ञ की भाँति ही मुझे अपना कार्य करते रहना चाहिये।''

अपने सहयोगियों को उत्तर देते हुए पूज्यश्री तनसिंहजी ने जो कहा, उन्हीं की जुबानी-

''मैंने स्थितप्रज्ञ बनने की भी चेष्टा की है, पर मुझे वे नहीं, उनके वे दिन याद आते हैं, वे रातें याद आती हैं वे भोले-भाले पगले और निष्पाप क्षण याद आते हैं, जिनमें वे और हम मिले थे। वे शब्द और वाक्य याद आते हैं, वे वादे और विश्वास याद आते हैं। तुम्ही बताओ मैं उस भोलेपन को कैसे भूल जाऊँ, उस निष्काम पागलपन को कैसे भूल जाऊँ जो मेरे जीवन का स्पन्दन है। उन शब्दों और वाक्यों को कैसे भूल जाऊँ, जिनकी नींव पर मैंने

अपने जीवन की इमारत खड़ी की है। उस विश्वास को कैसे भूल जाऊँ, जिसे उन्होंने मुझे भेंट किया था। एकमात्र वह बहुमूल्य उपहार जिसे उन्होंने मुझे कभी दिया था, चाहे वह बेहोशी और बचपन में ही दिया हो, भुलाये नहीं भूल सकता। मैं विश्वासघाती नहीं हो सकता। मैं अकृतज्ञ नहीं हो सकता। उन्होंने जो दिन मेरे साथ बिताए, उनका वास्तव में ऋणी हूँ और यही ऋण है, जो मुझे खाये जा रहा है। उन्हें भूल सकता हूँ, पर उनका ऋण कभी नहीं भूल सकता और वही ऋण मुझे खाये जा रहा है। एक क्षण भी जो मेरे साथ रहा उस क्षण की कृतज्ञता के कारण मैं युग-युग के वियोग की कृतघ्नता सह रहा हूँ और मैं देख रहा हूँ कि मेरी इस सहनशक्ति के गुरुत्वाकर्षण से ही हमारे कौटुम्बीय सम्बन्ध अक्षुण्ण बने हुए हैं।

''भगवान राम ने बन्दर और भालुओं के लिये कहा कि जिन्होंने मेरे लिये सर्वस्व दिया वे मुझे भरत से भी अधिक प्रिय हैं, परन्तु मैं यदि आज अपने जीवन के सम्बन्ध में कुछ कहूँ तो यही कहूँगा कि वे मुझे राम से भी अधिक प्रिय हैं। पता नहीं क्यों उन्होंने समर्पण भाव से मेरे एक-एक उपदेश को प्रमाण मानकर जीवन के खेल खेलने शुरू किये? मैंने यदि कहा कि दिन है तो उन्होंने बाहर जाकर सूर्य को देखने की चेष्टा ही नहीं की और यदि कहा कि रात है तो आँखें बन्द कर जाज्वल्यमान सूर्य को अनदेखा कर दिया, जिसे अच्छा बताया उसकी बुराइयों को भी वे पी गये और जिसे बुरा बताया उसे अच्छा सिद्ध होने का अवसर ही नहीं दिया, तभी तो कितना ऋण है उनका मुझ पर कि उसके पूरे होने की सम्भावना ही नहीं। यमराज के सामने जाकर मुझे सबसे बड़ा डर है तो यही है कि कहीं उनमें से एक के प्रति भी विश्वासघात का आरोप न लग जाए।''

(क्रमशः)

कर्मकाण्ड की निरर्थकता

दो प्रकार की विधाएँ होती हैं। 1. अपरा विद्या, 2. परा विद्या।

वेद, शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, धन्य, ज्योतिष का ज्ञान; जिससे संसार का ज्ञान होता है, सभी अपरा विद्या कही गई है। उपनिषदों में इस विद्या को कर्मकाण्ड ही माना है। जो इनको श्रेयस्कर मान आनन्द मनाते हैं, वे संसार सागर को पार नहीं करते। बार-बार जन्म, जरा, मृत्यु के बन्धन में फँसते है। परम सुख एवं परम शान्ति परा विद्या (ब्रह्म विद्या) से ही मिलती है। यह विद्या उपरोक्त कर्मकाण्ड से परे किसी ब्रह्मनिष्ठ गुरु के चरणों में उपस्थित होकर, उसकी सेवा करके, उपदेश सुनकर, आज्ञा पालन करके ही प्राप्त की जा सकती है। कर्मकाण्ड तो उलझाता है, फँसाता है, बाँधता है, मुक्त नहीं करता। इसलिए ब्रह्मनिष्ठ पुरुषों ने कर्मकाण्ड को निरर्थक माना है।

मानव जीवन का लक्ष्य

– स्वामी रामसुखदास जी

हम विचार करके देखते हैं तो स्पष्ट मालूम होता है कि मनुष्य ही परमात्मप्राप्ति का अधिकारी है। जैसे चारों आश्रमों में ब्रह्मचर्याश्रम केवल पढ़ाई के लिये है। इसी तरह चौरासी लाख योनियों में मनुष्य शरीर ब्रह्मविद्या के लिये है। ब्रह्मविद्या की प्राप्ति के लिये ही मनुष्य शरीर है, और जगह ऐसा मौका नहीं है, न योग्यता है, न कोई अवसर है; क्योंकि अन्य योनियों में ऐसा विवेक नहीं होता। देवताओं में समझने की ताकत है, पर वहाँ भोग बहुत है। भोगी आदमी परमात्मा में नहीं लग सकता। यहाँ भी देखो, ज्यादा धनी आदमी सत्संग में नहीं लगते और जो बहुत गरीब हैं, जिनके पास खाने-पीने को नहीं है, वे भी सत्संग में नहीं लगते हैं। उन्हें रोटी-कपड़े की चिन्ता रहती है। इसी तरह नरकों के जीव बहुत दु:खी हैं। बेचारे उनको तो अवसर ही नहीं मिलता है। देवता लोग भोगी हैं, उनके पास बहुत सम्पत्ति है, वैभव है, पर वे परमात्मा में नहीं लगते, क्योंकि सुख-भोग में लगे हुए हैं, वहीं उलझे हुए हैं। अत: एक मनुष्य ही ऐसा है जो परमात्मा की प्राप्ति में लग सकता है। उसमें योग्यता है। भगवान ने अधिकार दिया है इसलिये मनुष्य शरीर की महिमा बहुत ज्यादा है, देवताओं से भी अधिक है।

शरीर तो देवताओं का हमारी अपेक्षा बहुत शुद्ध होता है। हम लोगों का शरीर बड़ा गन्दा है। जैसे कोई सूअर मैले से भरा हुआ यदि हमारे पास आ जाता है तो उसको छूने का मन नहीं करता, दुर्गन्ध आती है। ऐसे ही हम लोगों के शरीर से देवताओं को दुर्गन्ध आती है। ऐसा दिव्य शरीर है उनका। हमारे शरीर में पृथ्वी तत्त्व की प्रधानता है। परन्तु परमात्मा की प्राप्ति का अधिकार जितना मनुष्य शरीर वालों को मिलता है, इतना उनको नहीं मिलता। इसलिये मनुष्य-शरीर की बहुत महिमा है।

उत्तरकाण्ड में श्री काकभुंशुण्डिजी से गरुड़जी प्रश्न करते हैं कि सबसे उत्तम देह कौन-सी है? तो कहते हैं-मनुष्य शरीर सबसे उत्तम है क्योंकि **''नर तन सम नहिं कवनिउ देही। जीव चराचर जाचत जेही''।** चर-अचर सब जीव इस मनुष्य शरीर की याचना करते हैं, माँग रखते हैं। ऐसा कहकर आगे कहा-

नरक स्वर्ग अपवर्ग निसेनी।
ग्यान बिराग भगति सुभ देनी।।

(मानस 7/120/5)

मनुष्य देह नरक, स्वर्ग और अपवर्ग (मोक्ष)-ये तीन देने वाली है। इसके सिवाय परमात्मा का ज्ञान इस शरीर में हो सकता है। संसार से वैराग्य हो सकता है और भगवान की श्रेष्ठ शक्ति इसमें हो सकती है। इस शरीर में ये छह बात बताई। मनुष्य शरीर एक बड़ा जंक्शन है। यहाँ से चाहे जिस तरफ जा सकता है। ऐसी मनुष्य शरीर की महिमा है। इस महिमा को कहते हुए पहले ही नाम लिया-''नरक, स्वर्ग अपवर्ग निसेनी' नरकों में जा सकते हैं-यह महिमा है कि निन्दा! मनुष्य शरीर ऐसा है, जिसमें नरक मिल सकते हैं-तो यह निन्दा हुई। इसमें तात्पर्य क्या निकला? ऊँची-से-ऊँची और नीची-से-नीची चीज मिल सकती है, इस मानव शरीर से। यह इसकी महिमा है।

वास्तव में महिमा है शरीर के सदुपयोग की। इसका उपयोग ठीक तरह से किया जाए तो भगवान की श्रेष्ठ भक्ति मिल जाए, मुक्ति मिल जाए, वैराग्य मिल जाए, सब कुछ मिल जाए। ऐसी कोई चीज नहीं जो मनुष्य शरीर से न मिल सके। गीता में आया है-

यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं तत:।

(गीता 6/22)

जिस लाभ की प्राप्ति होने के बाद कोई लाभ शेष न रहे। मानने में भी नहीं आ सकता कि इससे बढ़कर कोई लाभ होता है और जिसमें स्थित होने पर वह बड़े भारी दुःख से भी विचलित नहीं किया जा सकता। किसी कारण शरीर के टुकड़े-टुकड़े किए जाएँ तो टुकड़े करने पर भी आनन्द रहे, शान्ति रहे, मस्ती रहे। दुःख से वह विचलित नहीं हो सकता। उसके आनन्द में कमी नहीं आ सकती।

तं विद्याद् दुःख संयोगवियोगं योगसंज्ञितम्

(गीता 6/23)

इतना आनन्द होता है कि दुःख वहाँ रहता ही नहीं। ऐसी चीज प्राप्त हो सकती है, मानव-शरीर से! मनुष्य शरीर की ऐसी महिमा तत्त्व-प्राप्ति की योग्यता होने के कारण से है। मनुष्य शरीर को प्राप्त करके ऐसे ही तत्त्व की प्राप्ति करनी चाहिए। उसे प्राप्त न करके झूठ, कपट, बेईमानी, विश्वासघात, पाप करके नरकों की तैयारी कर लें तो कितना महान् दुःख है।

यह ख्याल करने की बात है कि मनुष्य-शरीर मिल गया। अब भाई अपने को नरकों में नहीं जाना है। चौरासी लाख योनियों में नहीं जाना है। नीची योनि में क्यों जाएँ? चोरी करने से, हत्या करने से, व्यभिचार करने से, हिंसा करने से, अभक्ष्य-भक्षण करने से, निषिद्ध कार्य करने से मनुष्य नरकों में जा सकता है। कितना सुन्दर अवसर भगवान ने दिया है कि जिसे देवता भी प्राप्त नहीं कर सकते, ऐसा ऊँचा स्थान प्राप्त किया जा सकता है-इसी जीवन में! प्राणों के रहते-रहते बड़ा भारी लाभ लिया जा सकता है। बहुत शान्ति, बड़ी प्रसन्नता, बहुत आनन्द-इसमें प्राप्त हो जाता है। ऐसी प्राप्ति का अवसर है मानव शरीर में! इसलिये इसकी महिमा है। इसको प्राप्त करके भी जो नीचा काम करते हैं, वे बहुत बड़ी भूल करते हैं।

कोई बढ़िया चीज मिल जाए तो उसका लाभ लेना चाहिये। जैसे किसी को पारस मिल जाए तो उससे लोहे को छुआने से लोहा सोना बन जाए। अगर ऐसे पारस से कोई बैठा चटनी पीसता है तो वह पारस चटनी पीसने के लिये थोड़े ही है। पारस पत्थर से चटनी पीसना ही नहीं, कोई अपना सिर ही फोड़ ले तो पारस क्या करे? इसी तरह मानव-शरीर मिला, इससे पाप, अन्याय, दुराचार करके नरकों की प्राप्ति कर लेना अपना सिर फोड़ना है। संसार के भोगों में लगना-यह चटनी पीसना है।

भोग कहाँ नहीं मिलेंगे? सूअर के एक साथ दस-बारह बच्चे होते हैं। अब एक दो बच्चे पैदा कर लिये तो क्या कर लिया? कौन-सा बड़ा काम कर लिया? सांप के पास बहुत धन होता है। धन के ऊपर सांप रहते हैं। धन तो उसके पास भी है। धन कमाया तो कौन-सी बड़ी बात हो गई? ऐश-आराम सुख देखते हैं और कहते हैं कि इसमें सुख भोग लें। बम्बई में मैंने कुत्ते देखे हैं, जिन्हें बड़े आराम से रखा जाता है। बाहर जाते हैं तो मोटर और हवाई जहाज में ले जाते हैं। मनुष्यों में भी बहुत कम को ऐसा आराम मिलता है, जो कुत्ते को मिलता है। भाग्य में है तो कुत्तों को भी मिल जाएगा। कौन-सा काम बाकी रह जाएगा, जिसके लिये मनुष्य शरीर नष्ट किया जाए! भोगों के भोगने में, संसार का सुख लेने में धन कमाने में मनुष्य शरीर बर्बाद कर देना कितनी बड़ी भूल की बात है! झूठ, कपट, बेईमानी करके मनुष्य नरकों की तैयारी कर लेता है, यह महान पतन की बात है। कितना ऊँचा शरीर मिला है मनुष्य को! उस शरीर में आकर ऐसा काम कर ले! अतः सावधान रहना चाहिये कि बड़े-से-बड़ा काम हमें करना है, बढ़िया-से-बढ़िया काम हमें करना है। यह काम दूसरी योनि में नहीं हो सकता।

एक मनुष्य शरीर में किये हुए पापों का चौरासी लाख योनियों में भोग होता है। सत्य, त्रेता, द्वापर, कलि-ये-चारों युग बीत जाते हैं चौरासी लाख योनि और नरकों के कुण्ड भोगते-भोगते, फिर भी मनुष्य

शरीर में किया हुआ पाप बाकी पड़ा रहता है। बीच में भगवान कृपा करके मनुष्य शरीर देते हैं। सञ्चित पाप और पड़े हुए हैं। भोगने पर भी सारे पाप समाप्त नहीं होते, इतने महान् पाप हैं, जो इस मनुष्य शरीर में बनते हैं। यह मनुष्य शरीर है जिससे परमात्मा की प्राप्ति कर सकते हैं। अनन्त ब्रह्माण्ड जिसके फुरणा-मात्र से रचित होते हैं, पण्डित होते हैं, वे परमात्मा तुम्हारी आज्ञा मानने के लिये तैयार हो जाते हैं। **''ताहि अहीर की छोहरियाँ छछिया भरि छाछ पै नाच नचावें।''** उन गोपियों के हृदय में भगवान् के प्रति प्रेम होने के कारण वे कहती हैं-'लाला छाछ दूंगी, थोड़ा नाचो।' तो भगवान नाचने लग जाते हैं। 'लाला बंसी बजाओ, छाछ पिलाऊँगी।' अब बोलो छाछ के बदले वे परमात्मा नाचने और बंसी बजाने को तैयार! इतना ऊँचा पद, इस मनुष्य-शरीर से मिल सकता है। इस शरीर की प्राप्ति करके हम फिर कर लें नरकों की तैयारी-महान् दुःखों की तैयारी, कितनी बड़ी भारी गलती है। ऐसा मनुष्य-शरीर मिल जाए तो बड़े-से-बड़ा लाभ ले लेना चाहिये।

जैसे वृन्दावन में आ गये हो तो भगवान के दर्शन करो, जमुना जी में स्नान करो। वहाँ के रहने वालों से पूछो कि ज्यादा लाभ की बात कौन-सी है। ज्यादा पुण्यदायक, उद्धार करने वाली चीज कौन-सी है। वृन्दावन में आए हो तो वृन्दावन का आनन्द लो। अब वृन्दावन में आकर नाटक, सिनेमा देखते हो। अरे भाई! यहाँ क्यों आए? बम्बई? कलकत्ता में बहुत बढ़िया सिनेमा है। यह तो तीर्थ-स्थल है। भगवान् के दर्शन करो। जहाँ कीर्तन होता हो, कथा होती हो-ऐसी जगह जाओ और विशेष लाभ लो। वृन्दावन में आए हो ना? इसी तरह मानव शरीर में आये हो तो विशेष लाभ ले लो। पर यहाँ भी वही काम करते हो जो पशु-पक्षी करते हैं, वही खाना-पीना, वही बाल बच्चे पैदा करना। यह तो भैया कुत्ते बन जाओ तो तैयार, सूअर बन जाओ, गधे बन जाओ तो तैयार, कौआ बन जाओ तो तैयार। ये चीजें कौन-सी बाकी रहेंगी। इन चीजों के लिये आए हो क्या मनुष्य शरीर में? मनुष्य शरीर क्यों खराब करते हो?'' यह शरीर क्यों प्राप्त किया? भगवान ने कृपा कर शरीर दिया है तो इस शरीर से होने वाले वे लाभ लो, जो दूसरे शरीर में हो नहीं सकते।

बड़े भाग मानुष तनु पावा।
सुर दुर्लभ सब ग्रंथन्हि गावा।।

(मानस 7/42/4)

मनुष्य शरीर देवताओं को दुर्लभ है, ऐसा ग्रन्थों में कहा है। ऐसा दुर्लभ शरीर। जिसको प्राप्त करके केवल परमात्म-तत्त्व की प्राप्ति करनी चाहिये। केवल परमात्म तत्त्व में ही सच्चे हृदय से एकदम लग जाना चाहिये। मौका है भाई। जैसे मनुष्य शरीर दुर्लभ है, वैसे कलियुग भी दुर्लभ है। जैसा मौका कलियुग में मिलता है, वैसा अन्य युग में नहीं मिलता। ऐसे कलियुग में मौका मिला। उस कलियुग को प्राप्त करके भोगों में लग गए अथवा पापों में लग गए, अन्याय में लग गए। शास्त्र की दृष्टि से अन्याय, हम भी विचार से देखें तो अन्याय, लौकिक दृष्टि से अन्याय, लोग देख लें तो शर्म आये। ऐसे-ऐसे कामों में लग जाए मनुष्य शरीर प्राप्त करके। कितनी हानि की बात है! तो हम क्या करें।

आज दिन तक हुआ सो हुआ। गलती हुई तो हुई। आज से दृढ़ निश्चय कर लो कि समय बर्बाद नहीं करेंगे, पाप व अन्याय नहीं करेंगे। जल्दी-से-जल्दी तत्त्व की प्राप्ति कैसे हो? कैसे उस तत्त्व का बोध हो? कैसे भगवान के चरणों में प्रेम हो जाए? ऐसी लालसा लगाओ।

प्रश्न: क्या हमारा भी प्रेम हो सकता है? क्या इस शरीर से कल्याण हो सकता है?

उत्तर: ध्यान देकर सुनें। इस शरीर से ही कल्याण हो सकता है। कल्याण भी आप कर सकते हो।

लखपति बन जाओ आपके हाथ की बात नहीं, मकान-इमारत हो जाए, आपके हाथ की बात नहीं। संसार में यश, प्रतिष्ठा, मान, आदर, सत्कार हो जाए, आपके हाथ की बात नहीं है। परमात्म तत्त्व की प्राप्ति करना हाथ की बात है। इसमें सब स्वतंत्र हैं। मनुष्य मात्र इसमें स्वतंत्र है, कोई परतंत्र नहीं, क्योंकि बड़े भारी लाभ के लिये मनुष्य शरीर मिला है। परमात्म तत्त्व की प्राप्ति के लिये ही मानव-शरीर मिला है। उसको प्राप्त करना खास काम है। मनुष्य ध्यान नहीं देता है। रामायण में आया है-

कबहुँक करि करुना नर देही।
देत ईस बिनु हेतु सनेही।।

(मानस 7/43/3)

इस चौपाई पर आप थोड़ा ध्यान दें। भगवान विशेष कृपा करके मानव शरीर देते हैं। इसका अर्थ क्या हुआ? भगवान ने इस जीव पर विश्वास किया कि इसको मनुष्य शरीर दिया जाए, जिससे इसका दुःख मिट जाए, मेरी प्राप्ति हो जाए इसका कल्याण हो जाए। इस भावना से मानव शरीर दिया विशेष कृपा करके। जब भगवान की यह भावना है कि मेरी प्राप्ति कर ले तो थोड़ा-सा हम भी इधर ध्यान दें तो भगवान का संकल्प सच्चा होने ही वाला है, पर ध्यान नहीं देता मनुष्य। भगवान कृपा करके मानव शरीर देते हैं- इसका अर्थ यही है कि परमात्मा की प्राप्ति हो सकती है। भगवान ने विश्वास किया। यदि यहाँ आकर जीव भगवान की प्राप्ति नहीं करता है, तो भगवान के साथ विश्वासघात करता है। यहाँ आकर पाप, झूठ, कपट करता है तो बड़ा भारी नुकसान है।

निश्चय कर लो कि आज से पाप नहीं करेंगे। अन्याय नहीं करेंगे और भगवत्तत्त्व की प्राप्ति करेंगे। जैसे व्यापारी व्यापार खोजता है, इस तरह परमात्म तत्त्व की प्राप्ति के लिये खोज में लगना चाहिये। आपको कोई सन्त, महात्मा मिल जाए, कोई भगवत्प्राप्त पुरुष मिल जाए तो उनसे पूछो कि भगवान कैसे मिलें? भगवान के चरणों में प्रेम कैसे हो? जीवन्मुक्ति कैसे हो, इस बात की लालसा जगाओ तो-

जेहि कें जेहि पर सत्य सनेहू।
सो तेहि मिलइ न कछु संदेहू।।

(मानस 1/258/3)

नारायण! नारायण!! नारायण!!!

चरित्रशील उत्तम पुरुष

काम: क्रोधश्च लोभश्च मोहो मद्यमदादय:।
माया मात्सर्य पैशुन्यमविवेको विचारणा।।
अन्धकारो यृदच्छा च चापल्यं लोलता नृप।
अत्यायासोऽप्यनायास: प्रमादो द्रोहसाहसम्।।
आलस्यं दीर्घसूत्रत्वं परदारोपसेवनम्।
अत्याहारो निराहार: शोकश्चौर्यं नृपोत्तम।।
एतान दोषान् गृहे नित्यं वर्जयन् यदि वर्तते।
सनरो मण्डनं भूमेर्देशस्य नगरस्य च।।
श्रीमान् विद्वान् कुलीनोऽसौ स एव पुरुषोत्तम:।
सर्वतीर्थाभिषेकश्च नित्यं तस्य प्रजायते।।

(स्कन्दपुराण, प्रभासखण्ड)

गतांक से आगे

महान क्रान्तिकारी राव गोपालसिंह खरवा

– भँवरसिंह मांडासी

सलेमाबाद मन्दिर में राव गोपालसिंह घिरे :

भूतपूर्व किशनगढ़ राज्य का सलेमाबाद कस्बा राठौड़ों के लिये पूज्य धार्मिक स्थान है। वहाँ पर निर्मित श्री राधा-कृष्ण का भव्य मंदिर राठौड़ों का गुरुद्वारा माना जाता है। निम्बार्क सम्प्रदाय के गोस्वामी वहाँ के महन्त और पुजारी हैं। मन्दिर विशाल और सुदृढ़ किलेनुमा बना हुआ है। गढ़ की भाँति ही उसका ऊँचा प्रवेश-द्वार है। ऊँची प्राचीर है और उनके चारों कोनों पर बुरजें बनी हुई है। यह पहले खेजड़ला ठाकुर का गढ़ था जिसे उन्होंने निम्बार्क सम्प्रदाय की पीठ बनाने हेतु प्रदान किया था।

एक दिन राव गोपालसिंह को सलेमाबाद जाकर भगवद्-विग्रह के दर्शन करने की इच्छा हुई। अपनी सवारी के ऊँट को सलेमाबाद से दूर जंगल में एक खेजड़ी के बाँधकर मोड़सिंह भवानीपुरा को साथ लिए राव गोपालसिंह पैदल ही गाँव में गए और मन्दिर में प्रवेश किया। राव गोपालसिंह दिखने में कोई सामान्य व्यक्ति नहीं थे। चित्र में चित्रित प्राचीन राजपूत योद्धा की सी उनकी रौबीली सूरत, लम्बा कद, उन्नत ग्रीवा, आजानबाहु, तीखी नासिका, प्याले सी बड़ी-बड़ी आँखें, राजपूती तराछ के तेजस्वी मुख-मण्डल पर भोहों से छूती बलखाती मूँछे और शस्त्र-सज्जित देही, ऐसा सजीला और रौबीला राजपूत, दर्शकों की नजर से छिपा कैसे रह सकता था। मन्दिर के प्रवेश-द्वार के बाहर बैठे व्यक्तियों में एक व्यक्ति पुलिस के खुफिया विभाग का था। चाल-ढ़ाल और तेजस्विता से उसने उन्हें पहचान लिया कि यही राव गोपालसिंह है। राजपूताना के सभी राज्यों में खरवा राव गोपालसिंह को खोजने और बन्दी बनाने के राज्य सरकारों के आदेश प्रसारित हो चुके थे। साथ ही इनाम व पदोन्नति का प्रलोभन भी पता देने वालों के लिये प्रचारित कर दिया गया था। राव गोपालसिंह सायं मन्दिर में पहुँचे थे। उन्होंने रात्रि विश्राम मन्दिर में ही किया था। इस बीच उस व्यक्ति ने मंदिर के प्रवेश-द्वार के फाटक रात में बन्द हो जाने पर जब यह सुनिश्चित हो गया कि राव गोपालसिंह अन्दर ही है अति शीघ्र किशनगढ़ खबर पहुँचा दी। राज्य के दीवान के.एन. पवनास्कर लगभग सौ घुड़सवारों के साथ प्रातःकाल से पूर्व ही सलेमाबाद पहुँचे और टेलीग्राम से अजमेर कमिश्नर को राव गोपालसिंह को घेर लेने की सूचना भेज दी। ए.जी.जी. राजपूताना के सेक्रेटरी और इंस्पेक्टर जनरल पुलिस मी.केई तत्काल पुलिस दल के साथ सलेमाबाद पहुँचे गये। नसीराबाद सैनिक छावनी के 500 सैनिक मेजर कूपलैण्ड और ग्रीनफील्ड की कमाण्ड में मि. केई के साथ थे। डीग और भरतपुर के किलों के घेरे के पश्चात अब फिर एक राजपूत को गिरफ्तार करने हेतु अंग्रेज हुकूमत को एक बड़े सैन्य प्रदर्शन के आयोजन की आवश्यकता पेश आई। मन्दिर की एक बुर्ज पर चढ़कर राव गोपालसिंह ने यह सब देखा और अंग्रेजों की उन्हें बन्दी बनाने हेतु की गई तैयारी पर उन्हें हँसी आए बिना न रही। तुरन्त ही उनके मुख-मण्डल का रंग बदला और शत्रु की चुनौती का क्षत्रियोचित उत्तर देने हेतु उनकी भुजाएँ फड़क उठी। 26 अगस्त, 1915 ई. का दिन था वह।

राव गोपालसिंह को बुर्ज पर खड़े देखकर किशनगढ़ राज्य के दीवान पुवनास्कर ने पूछा-''कहिए अब क्या इच्छा है?'' राव गोपाल सिंह का उत्तर था-''जिस मान और मर्यादा की रक्षार्थ हमने टॉडगढ़ की नजरबन्दी तोड़ी और कष्ट झेले-उसकी रक्षा प्राण पण से करनी है।'' राव गोपालसिंह ने अपने चाचा मोड़सिंह के साथ बुरज पर मोरचे जमा लिए। इससे पूर्व मन्दिर के महन्त श्री बालकृष्णशरण देवाचार्य जी ने राव गोपालसिंह से कहा

था–''यदि आप चाहें तो मन्दिर से आपको बाहर निकाल दूँ, पिछे जो होगा मैं सह लूंगा। मैं तो विरक्त फक्कड़ हूँ, गवर्मेन्ट मेरा क्या बिगाड़ लेगी।'' सुनकर राव साहब ने कहा–''महाराज गुरुद्वारे को संकट में डालकर कायर की भाँति यहाँ से भाग जाने की सलाह आप मुझे क्यों दे रहे हैं? मेरे लिये ऐसा देव–दुर्लभ अवसर फिर कब आएगा कि भगवान के चरणों में और देश–बैरी इन गोरों से लड़ता हुआ क्षत्रियोचित मृत्यु का वरण करूँ व राजपूत की मौत मरूँ।'' सलेमाबाद की धरती अपने ही एक वीर पुत्र को गोद में समेटने को पुलकित हो उठी।

मन्दिर में राव गोपालसिंह के पास उपस्थित ठा. मोड़सिंह भवानीपुरा ने राव गोपालसिंह के हृदय में ईश्वर के प्रति बहुमूल्य अटूट श्रद्धा और समर्पण भाव की चर्चा श्री यज्ञदत्त उपाध्याय से की थी। उस उल्लेखनीय भगवद्–समर्पण भावना का वर्णन उपाध्याय के शब्दों में पठनीय है–''बुर्जे पर मोर्चा सम्भालने को आतुर राव गोपालसिंह ने भगवान के विग्रह के आगे माथा टेका और कई मिनट तक निश्चल टेके ही रहे। फिर तेजी से पूजा के पुष्पों में से एक पुष्प उठाकर श्रीचरणों में चढ़ाया और आँखें मूँद हाथ जोड़े मन ही मन कुछ गुनगुनाने लगे फिर कुछ क्षण बाद आँखें खोलकर बाहर निकलने लगे तो देखा पुष्प श्री चरणों से लुढक कर नीचे गिर गया है। ''तो कांई म्हारा भगवान ने आज म्हारी भेंट स्वीकार नी है।'' कहकर वे उसी स्थान पर नेत्र मूंदे गम्भीर मुद्रा में कुछ क्षण खड़े रहे। फिर सिर नवाकर ''जैसी तेरी इच्छा''कहते हुए बाहर निकल आए।

सलेमाबाद के मन्दिर घेरे का संचालक मि. केई (Keye) उस बड़े सैन्य प्रदर्शन के पश्चात भी रक्तपात के पक्ष में नहीं था। राव गोपालसिंह को वह जीवित ही बन्दी बनाना चाहता था। वह उन्हें आत्म–समर्पण के लिये तैयार करने के प्रयत्न में लगा हुआ था। मि. केई जानता था कि अपने अनेक सैनिकों के हताहत होने के पश्चात भी वह खरवा–ठाकुर को जीवित पकड़ने में कामयाब नहीं हो सकेगा। हट पर अड़ा आँटीला राजपूताना के ए.जी.जी. सर इलियट कॉल्विन ने जो राव गोपालसिंह के स्वभाव से बखूबी परिचित था, अपने सेक्रेटरी मि. केई को यही राय दी थी कि खरवा ठाकुर को ससम्मान आत्म–समर्पण के लिये तैयार किया जाना चाहिए।

उपरोक्त सभी प्रकार की परिस्थितियों को दृष्टि में रखकर उसने किशनगढ़ राज्य के दीवान पवनास्कर को राव गोपालसिंह के पास भेजकर कहलाया कि–''अब यहाँ से निकल भागना, आप के लिये असम्भव है। भला इसी में है कि आप आत्म–समर्पण कर दें।'' राव गोपालसिंह ने कहलाया–''बचकर निकलने का उपाय चाहे अब न रहा हो, परन्तु राजपूतों की तरह मरना तो अब भी मेरे हाथ में है।''

मि. केई ने तब एक पत्र लिखकर उन्हें समझाने का पुन: प्रयत्न किया जिसका हिन्दी आशय संक्षेप में उद्धत किया जा रहा है–

किशनगढ़ (सलेमाबाद)

ठाकुर गोपालसिंह अगस्त 26, 1915 ई.

आपको ज्ञात हो कि ''भारत रक्षा कानून'' (Defence of India Act) के अधीन प्रसारित आदेश की आप द्वारा अवज्ञा किए जाने के अपराध में अजमेर–मेरवाड़ा के चीफ कमिश्नर और राजपूताना के ए.जी.जी. ने आपकी गिरफ्तारी के आदेश जारी किये हैं।''

मैं चाहता हूँ कि आप स्वेच्छा से अपने को कानून के सुपुर्द करदें। यदि आपको मंजूर न हो तो फिर आपके विरुद्ध सख्त कार्यवाही शुरू करने से पूर्व मैं चाहता हूँ कि आपको सारी परिस्थितियों से अवगत करा दूँ। इसलिए आप मुझसे या कूपलैण्ड से या ग्रीन फील्ड से जो आपके परिचित सैन्य अधिकारी हैं, मिलने मन्दिर से बाहर आ जावें। मैं वचन देता हूँ कि वार्ता के बाद आपको सकुशल मंदिर में लौट जाने दिया जावेगा। आपको किसी प्रकार से हानि नहीं पहुँचाई जावेगी, बशर्ते आप भी कोई हिंसक कार्यवाही नहीं करें।

मिलने पर जो कुछ मुझे आपको कहना है वह आपके, आपके पुत्र कुँवर गणपतसिंह के और आपकी

रियासत के हक में होगा। इसलिए मैं आपको जोर देकर सलाह देता हूँ कि आप हम में से किसी एक के साथ मैत्री-भाव से मिलें और परिस्थिति पर गम्भीरता से विचार करें। हमारे साथ अजमेर से आया सैनिकों का दल है और किशनगढ़ राज्य की पुलिस और अश्वारोही जवान हैं। ऐसी अवस्था में यहाँ से निकल भागना आपके लिए असम्भव है। मैं आपको पुन: सलाह देता हूँ कि आपको हमारा यह प्रस्ताव मानकर लाभ उठाना चाहिए।

यदि आप मन्दिर से बाहर नहीं आना चाहते हैं तो हम आपके साथ में मोड़सिंह से मिलने को तैयार हैं, जिस पर अभी कोई आरोप, अभियोग नहीं है। यदि वह बाहर आवेगा तो उसे सकुशल वापस मन्दिर में भेजने का मैं वचन देता हूँ। वह हमारा संदेश आप तक पहुँचा देगा, परन्तु उसे भी निशस्त्र होकर ही बाहर आना होगा।

कृपया इस पत्रवाहक के साथ जल्दी निश्चित जवाब दें, देरी न करें।

Sd. L. M. Keye
Police Assistant to the A.G.G. & Inspector
General of Police, Rajasthan

मि. केई के उक्त पत्र को उनके द्वारा मामले की औदार्य भाव से हल करने की इच्छा का संकेत जानकर राव गोपालसिंह ने उनसे मिलना स्वीकार कर लिया। पत्र-वाहक के साथ कहला भेजा कि ''एक उच्च पदस्थ अंग्रेज अधिकारी के वचनों पर उन्हें पूर्ण विश्वास है, परन्तु वे भी एक राजपूत के वचन का विश्वास करके अकेले मन्दिर में आकर उनसे वार्ता करें तो उन्हें अति प्रसन्नता होगी।'' तदोपरान्त मि. केई मन्दिर में गये, लगभग आधे घण्टे तक बातें हुई। उसने राव गोपालसिंह को बताया कि उनके विरुद्ध काशी-षड़यन्त्र केस में जो बनारस-षड़यंत्र केस के नाम से पुकारा जाता था-शामिल होने के सरकार को पुख्ता सबूत नहीं मिला है। केवल कुछ संदिग्ध व्यक्तियों के बयानों से संदेह उत्पन्न हुआ है, जिन पर सरकार ने अधिक भरोसा नहीं किया है। आप पर केवल भारत रक्षा कानून के तहत दिए गए आदेश की अवज्ञा करके टॉडगढ़ से फरार होने का अभियोग है, जिसके परिणामस्वरूप आपको अधिक हानि नहीं होगी। राव गोपालसिंह ने यह सब बातें एक कागज पर लिखकर उन्हें देने के लिये आग्रह किया। मामला शान्ति से निपटता जानकर मि. केई ने समस्त विवरण लिखित में राव गोपालसिंह को दे दिया। राव गोपालसिंह की दो शर्तें और भी थीं। उनका कहना था कि सरकारी अधिकारियों के उनसे शस्त्र लेने के आदेश दुराग्रह के कारण ही उन्हें टॉडगढ़ की नजबन्दी तोड़नी पड़ी थी। शस्त्र राजपूत के लिये पूज्यनीय धार्मिक चिन्ह माने जाते हैं, इसलिए उनसे शस्त्र लेने की चेष्टा नहीं करनी चाहिए। उस शर्त के मानने से अनेक कानूनी बाधाएँ पैदा हो सकती थी। अत: तय किया गया कि सरकार राव गोपालसिंह के शस्त्र नहीं लेगी, किन्तु वे अपने पास के शस्त्रास्त्र मंदिर में विराजमान श्री ठाकुर प्रतिमा के भेंट चढ़ा देंगे, जो मन्दिर की सम्पत्ति मानी जावेगी। उन्हें वहाँ से हटाने का किसी को भी अधिकार नहीं होगा।

मंदिर में हुए वार्तालाप के समय राव गोपालसिंह ने इच्छा प्रकट की थी कि उनके वचनों पर विश्वास करके ''मि. केई'' घेरा उठाकर अजमेर चले जावें तथा वे स्वयं दूसरे दिन सुबह किशनगढ़ से रेल द्वारा अजमेर पहुँच जावेंगे। मि.केई ने राव गोपालसिंह की प्रतिष्ठा के अनुरूप ही उनके वचनों पर भरोसा करते हुए घेरा उठाना स्वीकार कर लिया। हाथ में आए एक उग्र राजविद्रोही को उसी की मरजी पर स्वतंत्र छोड़कर मि. केई ने अपने हृदय की महानता एवं विवेकशीलता का उल्लेखनीय उदाहरण प्रस्तुत किया था। घेरा उठाकर वह उसी दिन अजमेर चला गया।

राव गोपालसिंह ने भी उसी शाम अपने पास के शस्त्रास्त्र विनीत भाव से ठाकुर प्रतिमा के सम्मुख समर्पित कर दिए। समर्पित किए गये शस्त्रों में चार राईफलें थी। वे शस्त्रास्त्र अद्यावधि सलेमाबाद मन्दिर की सम्पत्ति हैं और उसी अति रोमांचकारी ऐतिहासिक घटना की स्मृति को चिर-स्मरणीय बनाए हुए हैं, किन्तु इनमें से चार शस्त्र सन् 1962 में सरकार ने हटा दिये। **(क्रमश:)**

गतांक से आगे

क्रांतिकारी डूंगजी-जवारजी

– डॉ. मातुसिंह मानपुरा

पाटोदा से निकलकर लोठजी ने साधु का भेष बनाने के लिये सामान लाकर लंगोट धारण किया। चिमटा, तुम्बी हाथ में लिए तथा करणोजी मीणा को चेले के रूप में तैयार किया। गुरु-चेले ने भभूत लगाकर अलखनिरंजन का उच्चारण करते हुए आगरा की राह पकड़ी। रास्ते में विचार-विमर्श करते एवं भावी योजना बनाते हुए गुरु-चेला आगरा पहुँच गये। आगरा किले के निकट उचित स्थान देखकर धूणा लगाया। गुरु-चेला भिक्षा लेने के लिये कहीं नहीं गए, जो पास में था उसी से काम चलाने लगे। किले के पहरेदारों की तरफ से अन्यत्र जाने का आदेश मिला। चेले ने कहा-''मेरे गुरु लोठनाथ सिद्ध पुरुष हैं, कभी एक जगह नहीं ठहरते हैं। साधु और जल ठहरने से गन्दे हो जाते हैं।'' सुरक्षाकर्मियों ने अधिकारियों को रिपोर्ट दी कि साधनहीन मात्र दो संन्यासी हैं। हमारा क्या बिगाड़ सकते हैं? दो चार दिन में अन्यत्र जाने का कह रहे हैं। कुछ दिनों के बाद गुरु-चेला के पास आते-जाते राहगीर ठहरने लगे। उत्सुकतावश कुछ पहरेदार भी बाबा लोठनाथ से आशीर्वाद लेने हेतु आने लगे। बढे हुए बाल, लम्बे चौड़े शरीर के धनी, राख का लेपन किए हुए लंगोटधारी बाबाजी आशीर्वाद देने लगे। कुछ समयोपरान्त जनसमूह की उपस्थिति में गुरुजी ने चेले को स्थान छोड़ने का आदेश दिया। स्थान छोड़ने की सूचना अँग्रेज अधिकारियों तक पहुँची तो उत्सुकतावश उन्होंने भी बाबा लोठनाथ के दर्शन करने चाहे। प्रवचन में सिद्धहस्त बाबाजी ने अँग्रेज एवं अन्य सुरक्षाकर्मियों को भूत एवं भविष्य की बातें बताई और कहा कि कल का सूर्योदय तो यहाँ होगा लेकिन सूर्यास्त अन्य जगह होगा। आस्तिक सुरक्षाकर्मी रुपये एवं गहने बाबा लोठनाथ के चरणों में भेंट करने लगे, लेकिन बाबाजी ने आशीर्वाद देते हुए इन्हें लेने से इन्कार कर दिया। जेल के सुरक्षाकर्मियों ने किसी भी प्रकार की सेवा करने का निवेदन किया तो गुरु-चेले ने आगरा किले की जेल देखने की इच्छा जाहिर की। सुरक्षाकर्मियों ने इसे सहर्ष स्वीकार किया। गुरु-चेले ने जेल की दीवारों, दरवाजों एवं सुरक्षाकर्मियों के पहरे सम्बन्धी जानकारी प्राप्त कर ली। जेल में कैदियों को देखते समय डूंगजी को चुप रहने का संकेत कर गुरु-चेले ने कैदियों को शीघ्र अच्छा समय आने का आशीर्वाद दिया।

लोठजी जाट एवं करणोजी मीणा ने पाटोदा आकर जवारजी को आगरा जेल की समस्त जानकारी दी तथा बताया कि उन्हें शीघ्र ही कालेपानी की सजा मिल सकती है इसलिए हमें देर नहीं करनी चाहिए। साथ देने वाले समस्त क्रान्तिकारियों को गुप्त रूप से समाचार पहुँचाया गया। कार्ययोजना के अनुसार इन स्वतंत्रता प्रेमियों ने बारात का रूप तैयार कर बठोट ठाकुर भोपालसिंह को दुल्हा बनाया। परम्परागत गायकारों ने राजस्थानी गीतों की झड़ी लगा दी। ''म्हारो केशरियो हजारी गुल रो फूल, पणिहारियां री निजर लागसी।'' स्वतंत्रता-प्रेमियों की इस बारात ने आगरा की तरफ प्रस्थान किया। हथियार एवं हथकड़ियाँ काटने तथा अन्य उपयोगी सब साधन साथ में थे लेकिन मार्ग में आने वाली अँग्रेजों की जाँच चौकियों को इसकी भनक तक नहीं लगने दी। पूर्वनिर्धारित योजना के अनुसार आगरा जेल से एक दो किलोमीटर पहले रेवड़ के ग्वाले से एक मेंढा खरीदा एवं उसे मार कर अर्थी तैयार की। सभी बारातियों ने रंगीन पगड़ी उतार कर शोकस्वरूप सफेद पगड़ी धारण की तथा 'राम नाम सत है सत बोल्यां गत है' का उच्चारण करना प्रारम्भ कर दिया। आसपास के गाँवों के लोगों में प्रचार कर दिया कि बींद (दूल्हा) के मामोसा का देहान्त हो गया है। आगरा की जेल के पास अर्थी का

अन्तिम संस्कार कर पड़ाव लगा दिया। जेल के सुरक्षाकर्मियों ने वहाँ इकट्ठे रहने का एतराज किया तो शोक संतप्त बारात ने विनम्र शब्दों में हाथ जोड़ कर निवेदन किया कि हमने बींद के मामोसा का अन्तिम संस्कार किया है। वो प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। हम यहाँ बारह दिन रहने के बाद आगे के लिये रवाना हो जाएँगे। ठहरने की स्वीकृति मिलने पर जेल में प्रवेश की योजना बनने लगी। दो-तीन दिन के ठहराव के बाद इन्हें जानकारी मिली कि जेल की सुरक्षा में लगे सैनिक दो दिन बाद ताजियों की व्यवस्था के लिये बाहर जाएँगे। उचित समय देखकर क्रान्तिकारियों ने रात में रस्सियों के सहारे जेल में प्रवेश किया तथा योजना के अनुसार अलग-अलग मोर्चा सम्भाला। लोहे के दरवाजों को काटकर डूंगजी ने कहा ये सब मेरे सुख-दुख के साथी रहे हैं। मेरे से पहले इनकी बेड़ियाँ काटो। लगभग 70 कैदियों को मुक्त करवाने के उपरान्त डूंगजी ने अपनी बेड़ियाँ कटवाई। ये कैदी भी इनके साथी हो गये। सुरक्षाकर्मियों से संघर्ष करते हुए सभी क्रांतिकारी सकुशल बाहर आ गए। अँग्रेज विरोधी जनमानस में खुशी की लहर फैल गई। अँग्रेजों के लिये यह बहुत बड़ा झटका था, जिसकी लन्दन तक समाचार पत्रों में चर्चा हुई। कवियों की वाणी मुखरित हुई।

आगळ तोड़ी आगरै, लन्दन गई पुकार
दरियावां धाका पड़ै, रंगह डूंग-जवार।।

आगरा की जेल से आने के बाद साथियों एवं साधनों में वृद्धि हुई। सेवर (भरतपुर) की जेल पर आक्रमण कर कैदियों को मुक्त करवाया तथा हथियारों में भी बढ़ोतरी हुई। राजपुताना के क्रांतिकारियों के हौसले बुलन्द थे। अँग्रेजों ने उन्हें पकड़ने के लिये स्थानीय शासकों पर अपना दबाव बनाया। सीकर के रावराजा ने अपनी असमर्थता व्यक्त की। जयपुर, जोधपुर तथा बीकानेर के शासकों ने समय आने पर कार्यवाही का आश्वासन दिया। राजपुताना में नसीराबाद छावनी इस क्षेत्र की सबसे बड़ी व सुरक्षित छावनी मानी जाती थी। स्वतंत्रता प्रेमियों ने सुनियोजित तरीके से इस छावनी पर धावा बोला तथा हथियार व खजाने को भी लूट लिया। लोग डूंगजी-जवारजी के गीत गाने लगे तथा जनसामान्य में यह धारणा बन गई कि अब अँग्रेज देश छोड़कर चले जाएँगे। डूंगजी-जवारजी को प्रत्येक गाँव से समर्थन मिलने लगा। इसके सम्बन्ध में गुप्त जानकारी अँग्रेजों को नहीं दी जाती थी। अंग्रेजों ने स्थानीय शासकों से हुए समझौते के अनुसार जोधपुर व बीकानेर की फौज को अपने साथ लिया। अँग्रेज सेना एवं डूंगरजी-जवार जी के मध्य बीकानेर क्षेत्र में उदरासर के पास मुठभेड़ हुई। अंग्रेज सेना द्वारा स्वतंत्रता के इन दीवानों को मुठभेड़ में मारने के लिये चारों तरफ से घेर लिया गया, लेकिन बीकानेर की सेना ने तत्काल समझदारी दिखाते हुए अपने पास कैद रखने का आश्वासन देकर जवारजी को आत्मसमर्पण के लिये तैयार कर लिया। बीकानेर के शासक द्वारा अंग्रेज अधिकारी को तर्क दिया गया कि कानून के अनुसार जवारजी एवं उनके समर्थक राजद्रोही हैं। सक्षम न्यायालय में उनके विरुद्ध मुकदमा चलाया जाये, लेकिन बीकानेर राज्य सेना द्वारा गिरफ्तार किये जाने के कारण इन्हें हमारी कैद में रखा जाएगा। अँग्रेज अधिकारियों को इसे मानने के लिये बाध्य होना पड़ा। डूंगजी अँग्रेजी सेना का घेरा तोड़कर अपने कुछ साथियों के साथ जैसलमेर की तरफ चले गए। अँग्रेज सेना उन्हें पकड़ने में असफल रही। अपनी असफलता से कुण्ठित अँग्रेज अधिकारियों ने जोधपुर के महाराजा तख्तसिंह के साथ तत्काल बैठक की। डूंगजी-जवारजी की लोकप्रियता के कारण जोधपुर महाराजा ने अपनी सेना को अँग्रेज सेना के साथ भेजने से इन्कार कर दिया तथा अँग्रेज अधिकारियों को भी इस वास्तविकता से अवगत करा दिया कि यदि साथ भेजने का निर्णय लिया गया तो हमारी सेना में भी विद्रोह हो सकता है, जिससे डूंगजी की शक्ति बढ़ेगी, जो आपके लिये समस्या पैदा कर देगी। लाचार अँग्रेज

अधिकारियों ने जोधपुर की सेना को अकेले भेजने की स्वीकृति दे दी। जोधपुर की सेना के सुलझे हुए सेनापति ओनाड़सिंह ने डूंगजी के समर्थकों के मध्यस्थों से वार्ता कर आत्मसमर्पण करवा दिया। स्वतंत्रता-प्रेमी डूंगजी को जोधपुर में नजरबंद कर दिया गया। अँग्रेज अधिकारियों ने अपने द्वारा स्थापित कोर्ट में डूंगजी-जवारजी पर राजद्रोह के मुकदमे दर्ज किये। डूंगजी को अधिक अपराधी मानते हुए फाँसी की सजा दी गई तथा जवारजी को उम्रकैद की सजा का आदेश हुआ।

साधन सम्पन्न से धन छीनकर साधनहीन को धन वितरित करने वाले इन देश प्रेमियों को आम लोगों के साथ-साथ शासक-वर्ग का भी अप्रत्यक्ष सहयोग था तथा समाचार पत्रों के मध्यम से सूचना प्राप्त कर मानवीय दृष्टिकोण रखने वाले अँग्रेज भी इनके प्रशंसक थे। इन्हें रॉबिनहुड माना। अँग्रेजी कानून के अनुसार डूंगजी-जवारजी अपराधियों की श्रेणी में गिने जाते थे। अँग्रेज अधिकारियों ने डूंगजी को दी गई फाँसी की सजा को सही बताया। उनके अनुसार अँग्रेजी खजाने से रुपये लूटना राजद्रोह से बढकर है, इसलिए फाँसी की सजा उचित है।

आगरा की जेल से डूंगरजी को मुक्त करवाने के अभियान में दूल्हा बनने वाले बठोट ठाकुर भोपालसिंह प्रभावशाली व्यक्तित्व के धनी थे। राजा-महाराजा के प्रतिनिधियों, जागीरदारों तथा स्वतंत्रताप्रेमी व्यक्तियों से सम्पर्क कर डूंगजी की फाँसी की सजा को माफ कराने के लिये अभियान चलाया। भयभीत अँग्रेज अधिकारियों ने इस प्रकरण के समाप्त होने में अपना हित समझा। जोधपुर व बीकानेर शासकों द्वारा डूंगजी-जवारजी को दिया गया अप्रत्यक्ष सहयोग विदेशियों के लिये चिन्ताजनक था। जोधपुर महाराजा तख्तसिंह ने डूंगजी को सुपुर्द करने की असमर्थता जाहिर कर दी। अँग्रेज अधिकारियों एवं स्वतंत्रता प्रेमियों के समर्थक बीच का रास्ता निकालने के लिये प्रयासरत थे। सीकर के रावराजा रामप्रताप सिंह पर मुक्त करवाने का दबाव बढा। इन्होंने अँग्रेज अधिकारियों, भारतीय शासकों एवं जनभावना को समझते हुए नसीराबाद छावनी से लूटे गये रुपयों के बदले 32,000 रुपये अँग्रेजी खजाने में जमा करवा दिये। राजपुताने की जनभावना के शासक डूंगजी को फाँसी की सजा के आदेश को निरस्त करते हुए उन्हें आजीवन नजरबंदी का आदेश हुआ।

बीकानेर में नजरबंद जवारजी राजपरिवार के निकट सम्पर्क में रहने के कारण सब प्रकार की सुविधाओं का उपभोग करते थे। सेवा करने वाले कर्मचारियों के अतिरिक्त मिलने-जुलने के लिये आने वाले रिश्तेदारों को भी सम्मान दिया जाता था। बीकानेर राजपरिवार के सदस्य अँग्रेजों से इनकी सजा माफ करवाने के लिये प्रयासरत थे। एक बार उच्चस्तर का अँग्रेज अधिकारी सपरिवार बीकानेर क्षेत्र का भ्रमण करने के लिये आया। वह राज्य की शान्ति व्यवस्था व आवभगत से प्रभावित हुआ। अँग्रेज अधिकारी की पत्नी राजपरिवार की महिलाओं से मिलने के लिये आई। उसे महारानी द्वारा सुन्दर हार भेंट किया गया तो उससे प्रसन्न होकर उसने कोई भी कार्य करवाने के लिये कहा। महारानी ने जवारजी की सजा माफ करने का आग्रह किया। अच्छे आचरण का हवाला देते हुए जवारजी की सजा माफी का आदेश जारी हो गया। जवारजी वापिस पाटोदा आये। इनका कोई भी समर्थक कैद में नहीं रहा। जवाहर सिंह के बाद बठोट ठाकुर भोपाल सिंह के दूसरे लड़के मूनसिंह गोद आये तथा पाटोदा के ठाकुर बने।

डूंगजी प्रारम्भ से ही लोकप्रिय क्रांतिकारी व्यक्ति थे। उनके प्रभावशाली व्यक्तित्व के कारण आगरा जेल से मुक्त करवाने के समय इनके निकट सहयोगी जवारजी, लोठजी, जाट, सांवतोजी व करणोजी मीणा के अतिरिक्त राजपुताने के अन्य क्षेत्रों से भी स्वतंत्रता प्रेमी आये। डूंगजी-जवारजी के पूर्वज पदमसिंह के वंशज श्री महावीरसिंह पाटोदा के संग्रह के अनुसार लोडसर के खुमाणसिंह, मलसीसर के

(शेष पृष्ठ 24 पर)

अतुलनीय त्याग

– स्व. शम्भुसिंह राजावत 'अल्पज्ञ'

आदर्शों के आदर्श मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम के समान तो राम ही थे। जिन्होंने माता कैकेयी की दुर्भावना को समझते हुए भी अनुज भरत के लिये स्वर्ग से भी बढ़कर समृद्ध एवं ऐश्वर्य सम्पन्न अवध का राजसिंहासन तृणवत त्याग दिया। चौदह वर्षों के लिये वनवास स्वीकारा। लेकिन आज के कलियुग में भी कुछ आदर्श हुए हैं, जिन्होंने आदर्श त्याग और अनुपम भ्रातृस्नेह की झलक दर्शायी है। ऐसा ही एक अनुपम उदाहरण है जो इतिहास के पन्नों में दबा पड़ा है।

आधुनिक भौतिकता की चकाचौंध में गुमराह होती युवा पीढ़ी अपने इतिहास को भुलाती जा रही है। जिसको अपने कुलगौरव के इतिहास का ज्ञान नहीं, वह युवा अपने कुल गौरव पर क्यों गर्वित होगा? हमें गर्व है अपने देश पर, उसके गौरव पर, जो जग में बेजोड़ है। जिसका साक्षी हमारा इतिहास है–

- अपने लघु भ्राता जोधाजी के लिये राव अखेराज ने मण्डोर की राजगद्दी का हक त्यागा था।
- अपने अनुज मोकलजी के लिये राजकुमार चूँडाजी ने मेवाड़ का राजसिंहासन त्याग था।
- अपने लघु भ्राता दयालदास के लिये ठा. भीमसिंह ने रायपुर की राजगद्दी सअनुरोध स्वेच्छा से छोड़ी थी।

राव रतनसिंह के स्वर्गारोहण के बाद उनके राजकुमार कल्याणसिंह रायपुर की राजगद्दी पर आसीन हुए थे। उनके दो पुत्र थे ज्येष्ठ पुत्र भीमसिंह तथा लघु पुत्र दयालदास जी। कुल परम्परानुसार ज्येष्ठ पुत्र होने के कारण भीमसिंह को रायपुर की राजगद्दी मिली। दोनों भाईयों में अति स्नेह था। आपके शासनकाल में प्रजा सर्व प्रकार सुखी थी, किसी भी प्रकार का अभाव, असंतोष एवं अराजकता का दुष्प्रभाव नहीं था। अपने अनुज दयालदास को आप अत्यधिक स्नेह करते थे, उसकी हर इच्छा की पूर्ति तत्काल की जाती थी। अपने ज्येष्ठ भ्राता ठाकुर भीमसिंहजी के प्रति दयालदास के मन में भी अत्यधिक आदरभाव था, उसने अपने ज्येष्ठ भ्राता को सदा रायपुर के महाराजा के रूप में ही श्रद्धायुक्त दृष्टि से ही निहारा, कभी भी आँख मिलाकर बात नहीं की, कभी भी मर्यादा की सीमाओं को लाँघने का दुष्प्रयास नहीं किया, कुल परम्परा का सदा ही ध्यान रखा। राजा का लघुभ्राता होने का गुमान उसके मन में तनिक भी नहीं था।

एक दिन ठाकुर भीमसिंह की अनुपस्थिति में दयालदास राजदरबार भवन में जा पहुँचा, जहाँ दरबारियों एवं विशिष्ट नागरिकों के बैठने के लिये सुन्दर आसन जमे हुए थे, जिन पर मसनदें लगी हुई थी, केसरिया रंग की कालीनें बिछी हुई थी। सामने ऊँचे मंच पर राजा का भव्य आसन सुशोभित था, जिस पर बूंटादार कोमल रंगीन मखमल की बनी हुई सुन्दर गद्दी सुव्यवस्थित ढंग से स्थित थी, पीछे की ओर बड़ी भव्य मसनद लगी हुई थी।

दरबार भवन की भव्यता एवं सुन्दरता को काफी देर तक निहारने के बाद दयालदास राजा की गद्दी के निकट मंच पर पहुँचा, उसकी भव्यता एवं कोमलता को परखने के लिये उसने अपने दोनों हाथों से गद्दी को बार-बार दबाया। राजगद्दी पर आसीन होने की सुखद स्थिति की काल्पनिक अनुभूति से वह मन में अति आनन्दित हुआ। अनूठे आनन्द को वह अपने मन में ही समाए हुए नहीं रख सका और अचानक उस राजगद्दी पर बैठ गया। राजगद्दी पर बैठने की सुखानुभूति से वह निज में अति गर्वित एवं हर्षित हुआ। अकल्पनीय कल्पनाएँ उसके अपरिपक्व मनमानस पर छाने लगी। निज ज्येष्ठ भ्राता महाराजा भीमसिंहजी की स्थिति का आँकलन करते हुए उसका मूढ़ मन स्वयं से तुलना भी करने लगा–

'क्यों? कहाँ ठाकुर भीमसिंह और कहाँ मैं..? ऐसी स्थिति में...? दो सहोदरों की स्थिति में ऐसा भेद क्यों? क्या उस अखिलेश ने उनको (ठा. भीमसिंह) ज्येष्ठता का

पुरस्कार दिया है और मुझको लघुता का ऐसा दण्ड...? नहीं-नहीं......यह दैवी व्यवस्था नहीं है, यह तो मानुषी मनमानी है। काफी देर तक अपनी दोनों आँखें मूँदकर दयालदास अच्छे-बुरे, उचित-अनुचित, हितकर-अहितकर विचारों के सागर में डुबकियाँ लगाता रहा। तब ही अनुचर चौबदार (द्वारपाल) ने दरबार भवन में प्रवेश किया तथा दयालदास को राजगद्दी पर ध्यानस्थ देखा तो उसको बुरा लगा। तनिक ठिठक कर वह सोचने लगा-ये छोटे ठाकुर आज राजगद्दी पर यों क्यों आकर बैठ गये? इनको तो मंच पर भी नहीं चढना चाहिए, इनको तो दरबारियों के आसन पर बैठने का भी अधिकार नहीं है।.....यह तो मेरी गलती से हुआ है। यह दरबार भवन में कब आ गए, मुझको मालूम ही नहीं। इनके मन में क्या बात है? यह यों आँखें बन्द करके क्या सोच रहे हैं?

महाराज पधार आए हैं अपने महल में गए हुए हैं उनको इस स्थिति की जानकारी होवेगी तो वे मुझ पर अतिक्रुद्ध होंगे। और मुझको दण्ड भी देंगे। अब तो मुझको अति शीघ्र छोटे ठाकुर को राजगद्दी से उतार कर चुपचाप यहाँ से भगा देना चाहिए।...सोचता हुआ चौबदार मंच पर पहुँचा और ध्यानस्थ दयालदास को झकझोरते हुए कहा-उठिए-उठिए-छोटे ठाकुर सा उठिए। महाराज पधार गए हैं। आपको इस गद्दी पर बैठने का अधिकार नहीं है। उठिए और चुपचाप यहाँ से चले जाएँ। चौबदार की हरकत से दयालदास सजग तो हुए लेकिन गद्दी पर बैठे बैठे ही बोले-क्यों? मेरे ज्येष्ठ भ्राता सदा जिस गद्दी पर बैठते हैं उस पर कुछ समय के लिये उनका भ्राता बैठ गया तो तुमको बुरा क्यों लगा? तुम मुझको क्यों उठाना चाहते हो?

आपके सारे प्रश्न बेतुके हैं, एक भी प्रश्न उत्तर देने योग्य नहीं है अत: शीघ्रता से उठकर चुपचाप इस दरबार भवन से बाहर चले जाएँ। नहीं तो महाराज मुझको ही नहीं आपको भी दण्डित करेंगे। अब सोचिए मत, उठ जाइए। आपकी इस गलत हरकत से मुझ गरीब को जो दण्ड मिल सकता है उसकी आप कल्पना भी नहीं कर सकते। आपके अनुचित कर्म के कारण मुझ गरीब के बच्चे अनाथ हो जाएँगे।

दयालदास तो फिर भी गद्दी पर ज्यों के त्यों बैठे रहे मानो उसने चौबदार का कथन सुना ही नहीं। फिर तो चौबदार ने उसकी बाँह पकड़ कर उठाया और कहा-यहाँ से चुपचाप निकल जाएँ, इसी में आपका और मेरा भला है।

अब तो दयालदास के मन में स्वयं के जीवन के प्रति अति ग्लानि हुई, उसकी आँखों से अश्रुधारा बह चली, वह चुपचाप निज सिर झुकाए धीर-धीरे चलकर दरबार भवन के द्वार से बाहर निकलने लगा तो सामने से आते हुए महाराज भीमसिंह की छाती से उसका सिर टकराया। वह संभला और सामने महाराज को देखकर तुरन्त उनके चरणों को स्पर्श करने हेतु झुका तो उसकी आँखों से निकलती हुई आँसुओं की बूँदे महाराज के पैरों पर टपक पड़ी। महाराज भीमसिंह ने तत्काल अपने दोनों हाथों से पकड़ कर अपने लघु भ्राता को उठाया और उसका मुरझाया हुआ चेहरा देखा तो वे भी अति गम्भीर एवं उदास हो गए। अपने अनुज के माथे पर हाथ फेरते हुए बोले-क्यों? क्या हुआ-दयाल? तुम रो क्यों रहे हो। तुमको किस बात का दु:ख है? तुम्हारे साथ किसने अनुचित व्यवहार किया है? कौन है वह? मुझे शीघ्र बताओ। कुछ देर बिना कुछ बताए दयालदास खड़ा-खड़ा आँसू टपकाते रहा तो महाराज भीमसिंह ने ही उसका मुख अपने हाथ से ऊँचा करते हुए कहा-नि:संकोच और नीडर होकर तुम सब कुछ मुझको बताओ। अब तो दयालदास ने राजगद्दी की ओर अपने हाथ से इशारा करते हुए कहा-मैं इस गद्दी पर बैठ गया तो चौबदार ने मुझको उठा दिया और कहा कि इस गद्दी पर बैठकर मैंने दण्डनीय अपराध किया है।

दयालदास के मुख से कही गई थोड़ी बात को बहुत अधिक समझकर महाराज भीमसिंह अपने अनुज की मनोदशा को भाँप गए उसके मन में अंकुरित महत्त्वाकांक्षा की पूर्ति हेतु वे गंभीरता से सोचते हुए बोले-'अब तुमको इस राजगद्दी से चौबदार ही नहीं अन्य कोई भी नहीं उतार सकेगा।'

'कोई भी नहीं उतार सकेगा, मुझको?' उत्सुकता से दयालदास ने पूछा। हाँ....मैं भी नहीं (पीठ थपथपाते हुए) अब तुम प्रसन्न होकर जाओ। भीमसिंह ने कहा।

अब तो दोनों भ्राताओं के मन में उथल-पुथल मच गई। दोनों के हियसागर में अनेक प्रकार के विचारों की तरँगें उठने लगी। एक सोचने लगा-'जब मुझको महाराज भी गद्दी से नहीं उठा सकते तो उस चौबदार ने क्यों उठाया? उस अदना आदमी ने इस प्रकार मेरा अपमान क्यों किया?'

दूसरी तरफ-दरबार भवन में जाकर भी महाराज भीमसिंह अपने आसन पर नहीं बैठे। वे अन्य आसन पर बैठकर गंभीरता से सोचने लगे। सच्चे भ्रातृस्नेही भीम की भीम जैसी विशाल छाती में आज अनुज के प्रति जो अनुराग ज्वार उठा वह छाती में समा नहीं सका। उन्होंने सोचा उस चौबदार ने तो अपने कर्त्तव्य का पालन किया है, न कि दयालदास का अपमान। उस दयालदास ने अपने मन के निराकार विकार को साकार किया है। जो नामलूम कब से उसके मन-मानस में शूल की भाँति चुभ रहा था। अब तो दयाल के हृदय का शूल तब ही निकल सकता है जब उसकी सोच के अनुसार उसको अपमानित करने वाला चौबदार स्वयं नतमस्तक एवं करबद्ध होकर उससे निवेदन करके राजगद्दी पर उसको बैठाए। भीमसिंह ने अपने वैचारिक निर्णय की क्रियान्विति का दृढ़ निश्चय कर लिया था। इसलिए अपने परिजनों, गणमान्य पुरजनों, स्वजनों एवं दरबारियों को तुरन्त भवन में आमन्त्रित किया।

अचानक दरबार आहूत करना, परिजनों, पुरजनों एवं स्वजनों को भी आमंत्रित करना, सबके लिये समझ से परे एवं आश्चर्यजनक था। राजगद्दी के निकट खड़े-खड़े ही भीमसिंह ने सबको सम्बोधित किया-''दरबार भवन में उपस्थित समस्त परिजन, पुरजन, स्वजन एवं दरबारीगण! सर्वप्रथम मैं अपनी पूज्या मातुश्री को नमन करता हूँ और आप सबका सम्मान। आज अचानक आहूत दरबार किसी विशेष कार्य की सम्पन्नता के लिये है। जिसकी जानकारी आप लोगों को नहीं है। अब मैं आप सबको अवगत कराने से पूर्व अनुरोध करता हूँ कि आज राजा के आदेश की पालना करना सबके लिये समान रूप से आवश्यक है।''

आज से मैं रायपुर की राजगद्दी का अधिकार अपनेअनुज 'दयाल' को सौंपता हूँ। ठा. भीमसिंह की अप्रत्यशित घोषणा को सुनकर सभी अवाक्, एक-दूसरे का मुख देखने लगे। चारों ओर सन्नाटा छा गया। कुछ क्षण चुप रहने के बाद राजमाता ने खड़े होकर कहा- ''भीम! तुम यह क्या कह रहे हो? ऐसा नहीं होगा। राजगद्दी पर तो केवल तुम्हारा अधिकार है। तुम्हारा विचार कुल परम्परा के विपरीत है, ऐसा नहीं होगा।''

दयालदास ने लपक कर अपने ज्येष्ठ भ्राता के पाँव पकड़ लिए और कहा-नहीं...नहीं....महाराज ऐसा कभी नहीं होगा। मुझको रायपुर की राजगद्दी नहीं अपने ज्येष्ठ भ्राता की गोद चाहिए। आपका स्नेह चाहिए, आप मेरी धृष्टता को क्षमा करें, रायपुर की राजगद्दी पर तो आपका ही अधिकार रहेगा।

उपस्थित सभी सामन्तों ने एक स्वर से कहा-राजगद्दी पर तो केवल आपका ही जन्मजात अधिकार है और रहेगा-महाराज।

अधिकार को स्थानान्तरित तो किया जा सकता है मैं तो स्वेच्छा से अपने हक का त्याग कर रहा हूँ। ठा. भीमसिंह ने कहा।

मैं आपके प्रदत्त अधिकार को स्वीकार नहीं करूँगा, महाराज, दयालदास ने पुनः कहा।

ठा. भीमसिंह-यह मेरा अनुरोध नहीं, वरन आदेश है। रायपुर के राजा का आदेश स्वीकार करना मेरे अनुज दयाल का कर्त्तव्य है।

दयालदास-नहीं...नहीं....महाराज मैं आपके आदेश को स्वीकारने के लिये बाध्य नहीं हूँ।

भीमसिंह, राजा के आदेश की अवहेलना करने वाला व्यक्ति दण्ड का भागी होता है।

दयालदास–हाँ महाराज! आपके आदेश की अवहेलना करने पर दिया जाने वाला हर दण्ड मुझे स्वीकार है। आप मेरे लिये दण्ड की घोषणा करें।

''दण्ड यही है तुम राजगद्दी पर बैठो और रायपुर के शासन की बागडोर संभालो।'' कहते हुए भीमसिंह ने शाही तलवार अपनी कमर से खोलकर अनुज दयाल की कमर में बाँधी। अपने साफा पर लगा हुआ शाही सरपेच उतारकर अनुज दयाल के साफा पर लगाया और उसको राजगद्दी पर बैठाया।

ठाकुर भीमसिंह के निकट पहुँचकर राजमाता ने कहा– ''भीम! आज तुमने अचानक ऐसा क्यों किया? किसी को भी आभास तक नहीं होने दिया, ऐसा क्यों?

मन्द मन्द मुस्काते हुए मौन भीमसिंह ने मातुश्री के चरण स्पर्श किए और दरबार भवन से बाहर आ गए।

राजमाता का निषेध, दयालदास का अनुनय-विनय, सामन्तों का अनुरोध और नागरिकों का नम्रतायुक्त निवेदन सबका सब व्यर्थ रहा। ठाकुर भीमसिंह को अपने दृढ़ निश्चय से कोई भी नहीं रोक सका। वह महान त्यागी, सच्चा भ्रातृस्नेही और अपनी बात का धनी चल दिया तो चल ही दिया, उसने रायपुर की ओर मुड़कर भी नहीं देखा।

इतिहास में उल्लेख है कि अपने इष्टदेव पर दृढ़ आस्था रखने वाले, अपने भुज बल पर विश्वास रखने वाले ठा. भीमसिंह ने मन्दसौर के निकट अपना नया राज्य स्थापित किया।

धन्य है ऐसे भ्रातृस्नेही एवं अनुपम त्यागी ठा. भीमसिंह को जिसने भगवान श्रीराम के भातृस्नेह और त्याग की आँशिक झलक इस कलियुग में भी दर्शायी।

पृष्ठ 20 का शेष

क्रांतिकारी डूंगजी–जवारजी

कानसिंह, मींगणा के जोरसिंह, भोजलाई के अन्नेसिंह व ज्ञानसिंह, भीमसर के रघुनाथसिंह, खारिया के हरिसिंह व हठीसिंह नरुका, मंगलूणा के बख्तसिंह, मालसिंह, हरिसिंह बिदावत, भादरा के बिशनसिंह कांधलोत, आउवा के कुशलसिंह, खरवा के गोपालसिंह, मींगणा के चतरसिंह आदि मुख्य-मुख्य स्वतंत्रता प्रेमी व्यक्ति आये थे। इसी प्रकार जोधपुर में भी नजरबंद के समय शुभचिन्तकों का अभाव नहीं था। इन्हें लोकप्रिय प्रतिष्ठित व्यक्ति मानते हुये किले के भीतर चामुण्डा देवी के मंदिर के पास खुली जेल में रखा गया, जहाँ माताजी के दर्शन भी करते रहते थे। नोकर-चाकरों की सेवा सहित सभी सुविधाएँ उपलब्ध थी। राजकीय मेहमान की तरह डूंगजी अपने जेल स्थित आवास पर मिलने वालों को बुलाते रहते थे, लेकिन निर्धारित क्षेत्र से बाहर जाना वर्जित था। अच्छा जीवन व्यतीत करते हुये अन्तिम दिनों में जब बीमार रहने लगे तो इनके लिये अच्छे चिकित्सकों की व्यवस्था की गयी। डूंगजी का शरीर बचने की सम्भावना न रहने पर किले के सामने राखी ठाकुर श्यामसिंह चौहान की छतरी में आवास जैसी व्यवस्था कर उपचार किया गया, क्योंकि राजपरिवार के सदस्यों के अतिरिक्त किले से अन्य की शवयात्रा निकालने की परम्परा नहीं थी।

सीकर की लक्ष्मणगढ़ तहसील के पाटोदा गाँव में जन्मे राष्ट्रप्रेमी डूंगजी ने जन्म स्थान से 300 किलोमीटर दूर आसाढ बदी अमावस्या वि.सं. 1907 को अन्तिम श्वांस ली। जोधपुर के ही कागा श्मशान घाट पर परिजनों, रिश्तेदारों एवं शुभचिन्तकों की उपस्थिति में अन्तिम संस्कार सम्पन्न हुआ। यहाँ पर छतरी का निर्माण भी किया गया। मूर्धन्य साहित्यकार हड़वन्त सिंह देवड़ा का यह दोहा इस प्रकार के क्रांतिकारियों एवं मातृभूमि के रक्षकों का स्मरण करवाता रहेगा–

दीवा तो रातां जळै, बुझ जावै परभात।
सूरा दीवा देश रा, रोज जळै दिन रात।।

आदर्श और अनूठे गाँव

– कर्नल हिम्मतसिंह

प्रस्तावना :

अनादिकाल से ही आदर्श गाँव की कल्पना का सिलसिला अनवरत जारी है। कदाचित आदर्श की चरम सीमा होती ही नहीं है। सुधार और उन्नत विकास की संभावनाएँ सदैव बनी रहती है। हर युग में प्रयास किये गये हैं और ये प्रयास निरंतर चलते रहने चाहिए। बदलते हुए युग के अनुकूल योजनाएँ बननी चाहिए और बदलते हुए विश्व की गति के अनुसार परिवर्तन की भी गति तेज होनी चाहिए। इस प्रक्रिया को और अधिक गति प्रदान करने के लिये उसमें प्राणशक्ति भरने के लिये कुछ नये तत्व हर बार जोड़ते रहना आवश्यक हो जाता है।

आदर्श गाँव की कल्पना का संदर्भ सबसे पहले अथर्ववेद में मिलता है।

''विश्वं पुष्टं ग्रामे आस्मिन अनातुरम्''

अर्थात् इस गाँव में आतुरता रहित विश्व हो। जैसे विश्व अपने आप में समग्र परिपूर्ण है वैसे ही गाँव भी पुष्ट (समर्थ) और आतुरता (चिंता) परेशानी रहित एक समग्र इकाई के रूप में स्थापित हो।

भारत ग्राम प्रधान देश है। महाकवि सुमित्रानंदन पंत ने ''भारत माता ग्राम वासिनी'' नामक कविता में ठीक ही कहा है–''भारत का वास्तविक स्वरूप गाँवों में है। इसलिए राष्ट्रोत्थान के लिये ग्रामोत्थान को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।'' हमारे ऋषियों ने तो गाँवों के हितों को सीधे विश्व हित से जोड़ा है। यह हमारे ऋषियों की विशाल हृदयता का परिचायक है।

स्वतंत्रता आन्दोलन के क्रम में राष्ट्र को समर्थ बनाने के लिये महात्मा गाँधी, पण्डित मदन मोहन मालवीय जी ने गाँवों के उत्कर्ष को महत्त्व देते हुए कहा है–

ग्रामे ग्रामे सभा कार्या, ग्रामे कथा शुभा।
पाठशाला मल्लशाला, प्रतिपर्व महोत्सवा।।

अर्थात् जनता को जागरुक बनाने और दिशा–निर्देश देने के लिये गाँव में सभाएँ आयोजित हों। जनता के आध्यात्मिक विकास के लिये शुभ कथाएँ, धार्मिक चर्चाएँ हों, शिक्षा संवर्धन के लिये पाठशालाएँ तथा स्वास्थ्य सुधार के लिये व्यायामशालाएँ स्थापित की जायें। जन–जन में सांस्कृतिक जागरूकता, उल्लास और सहभागिता बढाने के लिये पर्वो के सामूहिक आयोजन किये जाएँ।

महात्मा गाँधी 1915 में विदेश से वापस आए। अफ्रीका के अनुभव के उपरान्त दो वर्ष के भीतर–भीतर उन्होंने यहाँ जो कुछ भी अध्ययन किया उसी के आधार पर बिहार के चंपारण में जाकर गाँव के लोगों के अधिकार के लिये लड़ाई लड़ना शुरू कर दिया। जन भागीदारी के साथ आजादी के आंदोलन का बीज गाँधीजी ने गाँव में बोया। महात्मा गाँधी की मान्यता थी कि भारत की आत्मा गाँवों में निवास करती है, इसलिए गाँवों की उन्नति से ही भारत की उन्नति हो सकती है। जब तक देश की ग्रामीण जनता को अशिक्षा, निर्धनता और दरिद्रता के वातावरण से निकालकर उसे आत्म निर्भर और स्वावलम्बी न बनाया जाए तब तक भारत की स्वतंत्रता अधूरी है।

गाँधीजी का जीवनादर्श था, स्वराज्य प्राप्त करना। उनका स्वराज्य रामराज्य का ही पर्याय था। उनकी स्वराज की कल्पा का मुख्य उद्देश्य था, गाँवों का सर्वांगीण विकास। गाँवों की कायापलट कर वे ग्रामीण जनता के मानसिक, सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक विचारों में क्रान्ति लाना चाहते थे, जिससे वे देश के आदर्श नागरिक बन सकें। उनके कथनानुसार पूर्ण स्वराज्य कहने का आशय यह है कि वह जितना राजा के लिये होगा, उतना ही

किसान के लिये, जितना किसी धनवान के लिये होगा उतना ही भूमिहीन खेतिहर के लिये जितना हिन्दुओं के लिये होगा, उतना ही अन्य सभी के लिये।

गाँधीजी ने आदर्श गाँव की कल्पना करते हुए कहा था कि जहाँ पीने के पानी की उत्तम व्यवस्था हो, पशुओं के चरने के लिये चारागाह हो, उसके बाँधने के लिये साफ सुथरी जगह हो, लोग और पशु बीमारियों से बचे रहें, गलियों और सड़कें स्वच्छ और सुन्दर हो वही गाँव आदर्श है। ग्राम विकास के लिये वे लघु उद्योगों पर जोर देते थे उनका मुख्य उद्देश्य था कि ग्रामवासी स्वावलम्बी बने और रोजगार की पर्याप्त संभावनाएँ गाँव में ही हों ताकि बाहर नहीं जाना पड़े।

विनोबा जी का भूदान आंदोलन तो ग्राम आधारित ही था। उन्होंने कहा था कि बड़े नगर तो शरीर में कैंसर के जख्म की तरह बढ़ रहे हैं। राष्ट्र के सुधार एवं विकास के लिये गाँवों को केन्द्र मानकर योजनाएँ संचालित की जानी चाहिए।

हमारे पूर्व राष्ट्रपति अब्दुल कलाम आजाद का तो जन्म भी गाँव में ही हुआ था। वे गाँवों के विकास के हिमायती थे। राष्ट्रपति के नाते उन्होंने अनेक गाँवों का भ्रमण किया था। उन्होंने विस्तार से गाँवों के विकास पर अपनी प्रतिक्रिया प्रेषित की थी।

सन् 1975 में संयुक्त राष्ट्र संघ ने भी गाँवों के सतत् विकास के लिये 17 लक्ष्य निर्धारित किये थे, वे भी विकास का प्रारूप तैयार करने में सहायक हो सकते हैं।

प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने ग्रामीण विकास के महत्त्व को रेखांकित करते हुए और अपनी प्रतिबद्धता को दोहराते हुए, 11 अक्टूबर, 2014 को लोक नायक जय प्रकाश नारायण की जयन्ती के शुभ अवसर पर ''सांसद आदर्श ग्राम योजना'' को प्रारम्भ किया। इस योजना का उद्देश्य एक आदर्श भारतीय गाँव के बारे में महात्मा गाँधी की व्यापक कल्पना को वर्तमान परिप्रेक्ष्य में यथार्थ रूप देना है और विकसित करना है। योजनानुसार ग्रामीणों के सहयोग और वैज्ञानिक उपायों का लाभ लेते हुए सांसदों के नेतृत्व में गाँवों के विकास को गति प्रदान करने का प्रयास करना है।

इस योजना का विस्तृत विवरण देते हुए उन्होंने सभी मुद्दों पर अपनी राय प्रकट की, उन्होंने विस्तार से बताया कि क्या करना है और कैसे करना है।

केवल सरकारी योजना से विकास सम्भव नहीं है। सरकार के द्वारा नहीं समाज के जरिये विकास का रास्ता चुनें। सरकारी सहायता के साथ-साथ जन भागीदारी के महत्त्व को समझें और स्वयं सहायता समूह की शक्ति को पहचानें। हमें गाँव के मिजाज बदलने की जरूरत है।

गाँव के लोग अपने गाँव पर गर्व करें, जब तक गर्व महसूस नहीं करेंगे तब तक स्वामित्व का भाव जागृत नहीं होगा तो बदलाव भी नहीं आयेगा।

कोई सोच पूर्ण नहीं होती है। हर सोच पूर्णता की ओर आगे बढ़ती रहनी चाहिए।

हमारे विकास का मॉडल आपूर्ति उन्मुख नहीं माँग उन्मुख होना चाहिए। ऊपर से नीचे की तरफ नहीं विकास नीचे से ऊपर फैले। स्वयं गाँव में ही इसकी इच्छा विकसित हो कि हमें केवल अपने विचार में परिवर्तन लाना है। हमें लोगों के दिलों को जोड़ना है। विकास आदेश से नहीं स्वप्रेरणा से सम्भव है।

लोक जीवन और राजनीति को अलग नहीं किया जा सकता, राजनीति से मुक्ति नहीं। गंदी राजनीति की जगह, स्वच्छ और उदार राजनीति को लेनी चाहिए। महात्मा गाँधी, राम मनोहर लोहिया, पण्डित दीन दयाल उपाध्याय, जय प्रकाश नारायण उदार विचारधारा के प्रतीक हैं जिनकी छांया किसी न किसी रूप में राजनीतिक जीवन पर आज भी है। उनसे प्रेरणा लेकर हम विकास की डगर पर आगे बढें।

सांसद आदर्श ग्राम योजना पर काम करने से सरकारी व्यवस्थाओं की बहुत-सी कमजोरियाँ उजागर होंगी और अनुभव बढ़ेगा।

गाँवों को महत्त्व देने पर चर्चाएँ तो बहुत होती रही परन्तु उस दिशा में आवश्यकता अनुरूप कार्य नहीं किये

गये। जीवन की आधारभूत सुविधाएँ 70 फीसदी ग्रामवासियों तक पहुँचाने से अधिक जोर 30 फीसदी नगरवासियों को उपलब्ध कराने पर ही दिया जाता रहा है।

योजनाएँ बनी भी, कुछ कदम चली भी लेकिन उन पर समुचित ध्यान नहीं देने के कारण उनके अपेक्षित परिणाम सामने नहीं आ सके।

गाँवों में बसे भारत की सुध ईमानदारी से कभी ली ही नहीं गई, उनके नाम पर योजनाओं के कसीदे जरूर पढ़े गये लेकिन वे उस जरूरतमंद तक पहुँची या नहीं, इसकी हकीकत कभी नहीं जाँची गई। सरकारों की चिंता न गाँव रहे न ही उनमें बसने वाले लोग। विकास की नदियाँ बहीं तो घाट सिर्फ राजधानी और बड़े-बड़े शहरों के चमके।

सरकारी योजनाएँ तो सभी गाँवों के लिये समान होती हैं। लेकिन कुछ ही गाँवों ने प्रगति की। अगर सरकारी योजना से ही गाँव प्रगति करते तो अन्य गाँवों में भी विकास की गंगा बहती दिखती। परन्तु ऐसा नहीं हुआ, इसका मतलब यह हुआ कि सरकारी योजनाओं के सिवाय भी कुछ और है। जिन गाँवों ने प्रगति की उनमें कुछ लोग प्रगतिशील, पुरुषार्थी, स्वाभिमानी और बुलंद हौसला रखने वाले थे। जिन्होंने स्वप्रेरणा, आपसी विश्वास, कर्तव्य-परायणता, निष्ठा और नैतिकता का ज्वलंत उदाहरण पेश करते हुए अपने प्यारे गाँव को ''आदर्श गाँव'' की श्रेणी में पहुँचाने के प्रयास में प्रशंसनीय सफलता प्राप्त की है। उन्होंने सब कुछ अपने बूते पर हासिल किया उनसे हमें सीखना चाहिए।

साधारण गाँव से आदर्श गाँव में परिवर्तित हुए गाँवों की समीक्षा करने से पता चलता है कि इनकी सफलता में मुख्य रूप से तीन कारकों के सम्मिश्रण का योगदान रहा है-

1. योग्य, निष्ठावान और समर्पित नेतृत्व जिसकी सोच भिन्न है और लकीर से हटकर काम करने की क्षमता रखता है।
2. उत्साहपूर्ण जन भागीदारी, जनमानस जिसको अपने गाँव से प्यार हो, गर्व करते हैं और स्वामित्व का भाव रखते हों और त्याग प्रवृति वाले हों। सहयोग के लिये सदैव तत्पर रहते हों। जन सहभागिता से होने वाले कार्य कामयाब और व्यवस्थित होते हैं। इन कार्यों से सबका जुड़ाव रहता है। साथ ही कार्य अधिक गुणवत्तापूर्ण, कम लागत वाले, त्वरित और विश्वसनीय होते हैं।
3. कल्याणकारी सरकारी योजनाओं की पर्याप्त जानकारी और उनसे फायदा उठाने की कला में निपुणता।

एक गाँव आदर्श बन जाता है तो बात वहीं तक रुकती नहीं है। अगल-बगल के गाँवों को भी हवा लगती है, वहाँ जो हुआ वह हम भी कर सकते हैं। एक प्रकार से संक्रामक प्रक्रिया शुरू हो जाती है। उपलब्धियों का प्रचार-प्रसार प्रारम्भ हो जाता है और इन उपलब्धियों को साझा करना ही इन लेखों का लक्ष्य है।

लेखों के अनुरूप, सर्वप्रथम अपने देश के विभिन्न प्रान्तों से चुनिंदा आदर्श गाँवों की उपलब्धियों का विवरण प्रस्तुत किया गया है। तदुपरान्त वे अनूठे गाँव जिन्होंने अनोखी और विशुद्ध परम्पराओं का निर्वहन कर ख्याति प्राप्त की है और अन्य गाँवों के प्रेरणास्रोत बने हैं।

यहाँ कुछ भी कल्पित नहीं है। जो हासिल किया जा चुका है उसी की प्रस्तुति दी जा रही है। ये आदर्श और अनूठे गाँव अन्य गाँवों के लिये अनुकरणीय उदाहरण/मिसाल तो प्रस्तुत करेंगे ही साथ ही लोगों को अपनी राह पर चल मंजिल तक पहुँचने के लिये प्रेरित भी करेंगे ऐसा विश्वास किया जाना चाहिए। **(क्रमशः)**

जहाँ हमारी सुन्दर कल्पना आदर्श का नीड़ बनाकर विश्राम करती है, वही स्वर्ग है, वही विहार, वही प्रेम करने का स्थल स्वर्ग है और वही इसी लोक में मिलता है। जिसे नहीं मिला, वह इस संसार में अभागा है।

- जयशंकर प्रसाद

दाता ने कहा था

– औंकारसिंह 'सात्यकि' हरिपुरा

दाता की तबीयत बिगड़ती ही जा रही थी। भँवर ने अपने काकोसा मदनसिंह से राय करके तय किया उन्हें तुरन्त शहर के अस्पताल ले जाना चाहिये। यह सुनते ही उन्होंने इन्कार कर दिया और बोले, ''बेटा! आखिरी समय में मुझसे अपनी जन्मभूमि क्यों छुड़ा रहा है, नहीं मैं कहीं नहीं जाऊँगा।'' वे अपनी जिद पर अड़े रहे। यह देख भँवर ने अपने चचेरे भाई भवानी को तहसील के डॉक्टर साहब को लाने भेज दिया। डॉक्टर ने जाँच करके दवाई दी और बताया कि हालत नाजुक है वैसे ईश्वर की कृपा रही तो दो-चार महीने भी निकाल सकते हैं। यह सुन भँवर रोने लगा। डॉक्टर ने उन्हें दवाइयों के बारे में हिदायत दी और चला गया।

दिन को गाँव के बड़े-बुजुर्ग आ जाते थे। दाता उनसे थोड़ी-बहुत बातें भी कर लेते थे। वे अस्सी बरस पार कर चुके थे। रोग एक हो तो कहें? बस यों समझ लीजिए कि बुढ़ापा ही सबसे बड़ा रोग था। उस दिन शाम को दाता ने मदनसिंह से कहा कि बाइ सुप्यार को बुलवा लो और बड़े बेटे, जो चुरू में पुलिस अधीक्षक थे, उसे भी सपरिवार आने को लिख दो। मदनसिंह ने अगले दिन भाभा व भाभी सा को तार दे दिया और भवानी भुवासा को लेने चला गया। भँवर रात-दिन दाता के पास बैठा रहता। वह अपने दाता का सबसे लाडला और बड़ा पोता था। दाता अपने बड़े कुँवर के मातृहीन पुत्र से अत्यधिक स्नेह करते थे।

ठाकुर हिम्मतसिंह, वही था दाता का नाम। शुद्ध राजपूती संस्कारों में पला बढ़ा यह ठाकुर गाँव का जागीरदार था। कठोर क्षात्र-नियमों का पालन करने के कारण वे अपनी जाति में व्याप्त बुराइयों से सदैव दूर रहे। जागीर-प्रथा समाप्त होने पर समय की नब्ज पहचानकर उन्होंने यथेष्ठ जमीन व अचल सम्पत्ति जुटा ली थी। यही कारण था कि उनका परिवार गाँव जीतपुर का ही नहीं बल्कि इलाके का प्रतिष्ठित परिवार था। बड़े कुँवर करणसिंह पुलिस अधीक्षक थे और छोटे मदनसिंह घरेलू खेतीबाड़ी और पशुपालन का काम देखते थे। पोते अच्छे आवासीय स्कूल में अध्ययनरत थे। ठकुरानी के पश्चात बड़ी बहू की मृत्यु का सदमा उन्हें पन्द्रह वर्ष पहले सहना पड़ा। बड़ी बहू से उनका एक पोता था भँवर। करणसिंह का दूसरा विवाह करके ठाकुर ने बहू को कुँवर के साथ भेज दिया ताकि भँवर को कोई कष्ट न हो। इसके बाद तो भँवर में उनके प्राण बसते थे। उन्होंने अपने स्नेह का संपूर्ण खजाना उस पर उँड़ेल दिया। इससे मदनसिंह स्वाभाविक रूप से भँवर से ईर्ष्या करने लगे। ठाकुर'सा अनुभवी आदमी थे सो उन्होंने भँवर को आवासीय स्कूल में पढ़ाया और गाँव आने पर सदैव अपने साथ खिलाते-पिलाते-सुलाते थे।अब वह शहर के महाविद्यालय का छात्र था और दाता के बीमार होते ही सेवा करने आ गया था। रात में काकोसा को आराम करने को कह वह जाग कर दाता की सेवा-सुश्रूषा कर रहा था।

''भम्मू! लगता है भगवान का बुलावा आने वाला है, एक हिदायत देनी थी तुझे; पता नहीं फिर समय मिले न मिले?'' कमरे में केवल दादा-पोता ही थे।

''दाता! ऐसा क्यूँ कहते हैं, आपको कुछ नहीं होगा।'' उसका स्वर भर्रा गया।

''मुझे केवल तेरी फिक्र है रे, मेरे बाद तू बिल्कुल अकेला हो जाएगा।''

''आप मेरी चिन्ता बिल्कुल मत कीजिये, बस आप अब आराम.......'' वह फूट-फूटकर रोने लगा। ''रोता है पगले....राजपूत भी कभी रोते हैं...नहीं रे तू तो मेरा शेर बेटा है....रोना तो कायरों का काम होता है रे...यहाँ इधर मेरे पास बैठ....'' दाता का स्नेह भरा काँपता हाथ उसके बाल सहलाने लगा फिर उसे छाती से लगा लिया।

रावले में सभी निद्रामग्न थे और नीरव रात्रि में दाता-पोता स्नेह-वर्षा से भाव विभोर हो रहे थे।

''देख भम्मू! जो रोता है उसे दुनिया और ज्यादा रुलाती है.....राजपूत को कभी कमजोर नहीं होना चाहिए। याद रख आँसू इन्सान के साहस को कम करते हैं....मेरे मरने के बाद एक भी आँसू मत बहाना वरना मेरी आत्मा को चैन नहीं मिलेगा...'' कहते हुए उन्होंने भँवर के आँसू पोंछ दिये। वह सुबकता हुआ बोला, ''अऽऽब न...नहीं.. रोऊँगा दाता।''

''शाबास बेटा! अपने को कभी अहसाय मत समझना.... सदैव यही याद रखना कि माँ भवानी का हाथ तेरे सिर पर है.....सच्चे क्षत्रिय की तरह संघर्ष का सामना चुनौती मानकर करना...याद रखेगा ना....मेरी बात...।''

''मैं आपका हर आदेश मानूँगा दाता, अब आप आराम करावो।'' वह उनके पैर दबाने लगा।

''अब तो आराम ही आराम करना है बेटा! मेरे मरने के बाद तुझे अपनी माँ की कमी बहुत खलेगी और तेरी सौतेली माँ का स्वभाव भी कठोर हो सकता......शायद तुझे दुख.....।''

''नहीं दाता! वे बहुत अच्छी है।''

''हाँ अभी तक तो उसका व्यवहार ठीक ही रहा है पर बेटा, मेरा अनुभव है कि सौतेला-पन वो जहर है जो अपना असर जरूर दिखाता है....प्रत्येक सौतेली माँ में ईर्ष्या की आग सदैव सुलगती रहती है और मौका आने पर वह सामने आ ही जाती है....बेटा! पानी स्वभाववश ढलान की तरफ ही बहता है....''कहते-कहते वे खाँसने लगे। भँवर उनकी छाती सहलाने लगा फिर दवाई पिलाकर नींद की गोली देने लगा।

''आज नींद....की....अ....गोली नहीं लूंगा....मुझे तकिये के सहारे...बैठा दे।'' उसने दाता को बैठाकर नशे व ताकत की गोली दी। वे कुछ देर आँखें मूंदे बैठे रहे फिर सिरहाने से लिफाफा और चाबियाँ निकालकर भँवर को दी।

''यह क्या है दाता?''

''इसमें मेरी रजिस्टर्ड वसीयत है इसकी एक प्रति वकील साहब के पास है....''

''लेकिन आप ये मुझे ही क्यों दे रहे हैं, कँवर सा, काकोसा....''

''उहँऽ तू पूरी बात सुन....अरे जो तुझे बताना है वह उन्हें क्यों कहूँ, सुन मेरी बात....''

वे भँवर को समझाने लगे, ''ये बैंक लॉकर और तेरी दादीसाके सन्दूक की चाबियाँ हैं....उनमें जो गहने हैं वे हमने तेरी बहूके लिये रखे हैं.......'''

''पर भाभूसा और काकीसा के?''

''उन्हें तेरी दादीसा यथोचित दे चुकी थी....और वसीयत में पुश्तैनी और मेरे खरीदे खेतों के तीन हिस्से किये हैं एक तेरा दो उनके....शहर का प्लाट मैंने तेरे नाम किया है....।''

''पर दाता इससे.....''

''कोई नाराज नहीं होगा.....बैंक खाते और एफ.डी. का नॉमिनी भी तू है....उसका प्रयोग मेरी वसीयत के अनुसार तुझे ही करना है।'' एक बार पुनः उसकी रुलाई फूट पड़ी।

''रोता क्यूँ है रे....पगला....यह सब मैं तेरे भले के लिये कर रहा हूँ....रो मत रेऽऽ''

भँवर को चुप कराते-कराते वे स्वयं कब रो पड़े इसका उन्हें पता भी न चला। भँवर ने उनकी आँखों में आँसू देखे तो सुबकते हुए बोला, ''रोते तो कायर लोग हैं फिर मेरे दाता तो राजपूत हैं तब उनकी आँखों में आँसू क्यों?'' उसकी भोली बात सुन वे इस स्थिति में भी मुस्करा पड़े, फिर स्नेह से उसका गाल थपथपाकर बोले, ''मेरी वसीयत के अनुसार अपना हक पास ही रखेगा, यह वचन दे मुझे....''

''वचन? कहीं कँवरसा, काकोसा इसे आपका अन्याय.....''

''ना उनके साथ मैंने कोई अन्याय नहीं किया है, देख

उनके नाम चार खेत अलग से हैं; घर दोनों के बनवा दिये हैं पूरे वे करवा लेंगे....यह रावला तो तेरा ही है.....फिर तू ऐसा मत जान कि मैं तेरे लिये यह कर रहा हूँ....यह तो मैं स्वर्गवासी बहू की अन्तिम इच्छा पूरी कर रहा हूँ जिसने मृत्यु शय्या पर कहा था कि, दाता..भम्मू..की...भोलावन आपको है।'' कहते-कहते बहू की याद में दाता की आँखें बहने लगी, भँवर भी रो पड़ा। कुछ देर चुप रहकर फिर बोले, ''बेटा! बड़ी लम्बी उम्र भोग चुका हूँ, जीवन में सुख-दुख, हर्ष-विषाद सभी देख लिया है।....स्वर्ग में तेरी दादी भी प्रतीक्षा करके थक गई होगी....अब इस जर्जर काया को अधिक ढोकर क्या करूँगा.....इसलिये मेरी बात सुन....मैं मृत्युभोज को तभी कुरीति समझता हूँ जब यह औकात से बढ़कर, ऋण लेकर, जमीन या सम्पत्ति बेचकर और पाखण्डपूर्ण तरीके से किया जाये.....तू मेरा मृत्युभोज वसीयतानुसार करना, इसके लिये रकम बैंक खाते में अलग से रखी है। .....एक खास बात सुन, बारह दिनों में गरुड़-पुराण मत पढ़वाना.....''

''क्यों दाता! ये तो सभी....''

''बेटा! क्षत्रिय का जीवन उच्च गुणों से विभूषित होता है और क्षत्रिय जीवन का आदर्श स्वर्गप्राप्ति है जबकि गरुड़-पुराण उन अनपढ, जाहिल और पापी लोगों के लिये है जो धर्म के बारे में कुछ नहीं जानते, ऐसे लोगों को इससे भय उत्पन्न होता है। हम क्षत्रिय ज्ञानी और पुरुषार्थी हैं अत: गरुड़-पुराण की हमारे समाज में कोई आवश्यकता नहीं है।'' इसके बाद दाता अपने द्वादशे के बारे में निर्देश देते रहे, भँवर तन्मयता से सुनता रहा। उसकी आँखें बार-बार भीग जाती जिन्हें वह छिपाकर पोंछ लेता। दाता के चुप रहते ही उसने उन्हें दवाई पिलायी और सोने के लिये कहा।

''अब तो चिर निद्रा में ही सोना है.....तुझसे दो बात कर लूँ तो आत्मा को शान्ति मिल जाये....बेटा; जमीन राजपूत की माँ होती है....वह अमर धन है....हमारा नदी वाला खेत मुकदमें में फँसा है...तेरे कँवरसा की प्रकृति मैं जानता हूँ वह हर काम को कानून की दृष्टि से देखता है....हो सकता है राजीनामें में वह हमारा दावा छोड़ दे.... कानून चाहे कुछ भी कहे...अधिकार की दृष्टि में वह खेत हमारा है। तू यह कब्जा मत छोड़ना और मुकदमा लड़ते रहना...समय आ जाये और खून बहाने की जरूरत आ पड़े तो पीछे नहीं हटना...समझले वह तेरे दाता की आन है।''

''आप निश्चिन्त रहें दाता! मेरे जीते वे इस खेत में पाँव भी नहीं रख सकेंगे।''

पोते की बात से दाता को संतोष हुआ और चेहरे से चिन्ता की रेखाएँ ढीली पड़ गयी। ''अब आप सो जाओ।''

''ना रे! आज तुझसे बहुत-सी बातें करनी है...भम्मू! राजपूत जाति नहीं है यह तो उच्च आदर्शों से परिपूर्ण जीवनशैली है....आज राजपूत अपने संस्कारों और रिवाजों को दकियानूसी और अन्धविश्वास बताकर आधुनिकता रूपी अंधी सड़क पर आँख बन्द करके भाग रहे हैं। इसके परिणामस्वरूप घर टूट रहे हैं, तनाव बढ़ रहा है साथ ही बीमारी और कुसंस्कारों का बोलबाला बढ़ गया है। इसका नतीजा अंतत: दुखदायी ही होना है......ऐसे लोग ये क्यों भूल जाते हैं कि आस्था और संस्कारों को तर्क और लाभ-हानि की तराजू पर नहीं तोला जा सकता। मैंने अपने खानदान को आधुनिकता की नंगी दृष्टि से अब तक बचाए रखा है....इतना जरूर है कि परम्परा के नाम पर किसी कुरीति-बुराई का समर्थन मैंने कभी नहीं किया इसी कारण कुटुम्ब वाले मुझे सनकी कहते रहे हैं फिर भी अनुचित लोक भय के कारण मैंने सिद्धान्तों के साथ कभी समझौता नहीं किया।''

''दाता! आपके सिद्धान्त और आदर्श ही तो मेरे जीवन का सम्बल बनेंगे।'' पोते की बात सुन दाता की आँखें गर्व से चमक उठी फिर बोले, ''मैं टीका और दहेज माँगने के सदैव खिलाफ रहा हूँ लेकिन बेटी को उसके वंश की समृद्धि का उचित हिस्सा देने का पक्षधर हूँ.....हाँ तेरे कँवरसा और काकोसा की सगाई मात्र वचनों से इसिलये की ताकि हमारी समृद्धि 'गिनायतों' के लिये खुशी का

कारण बने न कि दुख और आर्थिक परेशानी का.....तेरे फूंफोसा भीखसिंह के अनुरोध पर मैंने राजगढ़ के ठाकुर गोपालसिंह की बेटी से तेरी सगाई तय कर दी है....मैं उन्हें वचन दे चुका हूँ।'' भँवर शान्त भाव से सुनता रहा, ''आजकल समाज में लड़की की फोटो मँगवाने, उसे देखने का रिवाज चल पड़ा है। यही कारण है कि सम्बन्ध होने से पूर्व टूट जाते हैं फिर विवाद होने से रिश्तों में कटुता आ जाती है। यह मुझे पसंद नहीं है। नयी पीढ़ी की इस ओछी माँग के आगे माँ-बाप मजबूर हो जाते हैं, यह अविश्वास की पराकाष्ठा है, तू भी इसी पीढ़ी का है; बेटे। हमें अपने रिश्तेदार का विश्वास करना चाहिये। फिर सम्बन्ध निश्चय में महत्त्वपूर्ण सुन्दरता नहीं है बल्कि कन्या के गुण और खानदान ही अपरिहार्य होने चाहिये। इसी मान्यता के कारण जँवाई सा द्वारा विश्वास दिलाने पर मैंने सम्बन्ध जोड़ लिया है, तू वचन दे मुझे कि गोपालसिंह की बच्ची वीणा कुँवर ही इस घर की बहू बने।''

''आपकी आज्ञा शिरोधार्य करना मेरा कर्त्तव्य है दाता, मैं वचन देता हूँ।'' वृद्ध को संतोष हुआ।

अगले दिन पूरा परिवार इकट्ठा हो गया। पूरे परिवार को देख ठाकुर प्रसन्न थे। उन्होंने सभी को हिदयतें और आशीर्वाद दिया। रात्रि में उन्हें लगा कि अब समय आ गया है। उन्होंने सभी को हाथ जोड़े और आँखें शून्य में टिकाकर शरीर को ढीला छोड़ दिया। दोनों बेटे-बहू, बेटी जंवाई, पोते-पोती और भाई-बन्धु कमरे में मौजूद थे। नाड़ी धीमी पड़ती देख सभी ने निर्णय किया कि उन्हें धरती पर सुला दिया जाये। नीचे लिटाते ही उनके प्राण-पखेरू अनन्त को उड़ चले। एक बारगी घर में कोहराम मच गया। सुबह उनका दाह संस्कार सम्पन्न हो गया। एक कर्मशील राजपूत की जीवन यात्रा पूर्ण हो गयी। दाह संस्कार से लौटकर सभी दरीखाने में आकर बैठ गये। भँवर की आँखें अनवरत अश्रुधारा बहा रही थी। करणसिंह ने उसके सिर पर स्नेह से हाथ फेरा, परिचित स्पर्श पाकर भँवर के कानों में दाता के शब्द गूंज उठे, 'मेरे मरने के बाद आँसू मत बहाना वरना मेरी आत्मा को चैन नहीं मिलेगा।' उसने झट आँखें पोंछ ली।

वरिष्ठ सिरदारों ने करणसिंह व मदनसिंह से द्वादशे के प्रबन्ध के बारे में पूछा। सबने तय किया कि राजपूत-सपरिवार, बाकी जातियों से एक व्यक्ति और मदन हरिद्वार जायेगा। वे इसके अनुसार सामग्री की सूची बना रहे थे कि भँवर वहाँ आया। जब उसे व्यवस्था का पता चला तो वह बोला, ''नहीं बाबोसा! ऐसा नहीं होगा, द्वादशे के दिन पाँच पकवान बनेंगे, पूरा गाँव 'सीगरी' होगा और साथ ही खाँप की चौबीस कोटड़ियों को भी न्यौता देंगे। हरिद्वार में काकीसा, भवानी और जीतू जायेंगे।'' उसकी बात पर सभी चौंक पड़े।

''भम्मिया! तेरा सिर घूम गया है क्या?'' मदन सरोष बोल पड़े।

''भम्मसा! पहले अपने कँवरसा से तो पूछ ले।''बाबोस ने भी कहा।

''पूछने की जरूरत नहीं ऐसा दाता ने कहा था।'' ''भम्मू! तू जानता नहीं कि मृत्युभोज से हमारे समाज को कितना नुकसान हुआ है और मैं हमेशा इसका विरोधी रहा हूँ। सरकार ने भी इस पर प्रतिबन्ध लगा रखा है हमारे विरोधियों को अवसर मिल जायेगा। क्यों परेशानी बढ़ा रहा है?'' करणसिंह ने भँवर को समझाया।

''आपकी बात उचित है कँवरसा पर दाता की अन्तिम इच्छा पूरी करना भी हमारा कर्त्तव्य है।''

''भम्मिया! देख लेना मैं अपने हिस्से में से फूटी कौड़ी भी नहीं दूँगा, सोच ले।'' मदनसिंह बोल पड़े।

''दाता ने आपके बारे में सही कहा था काकोसा, पैसे की बात की किसने? दाता सब प्रबन्ध करके गये हैं।'' ''अच्छा! और क्या प्रबन्ध किया है दाता ने?'' मदनसिंह बौखला कर बोल पड़े।

''आप दोनों एक प्याऊ का संकल्प ले लेना बाकी वक्त आने पर बता दूँगा।''

(क्रमशः)

भारतीय संस्कृति और सदाचार

– श्री अरुण कुमार

भारतीय संस्कृति का लक्ष्य है– मानव की आध्यात्मिक उन्नति। सत्कर्म ही आत्मा और मन को पवित्र तथा निर्मल बनाने के मुख्य साधन है। जन्म–मरण का बन्धन ही जीवात्मा को मुक्ति या परमानन्द प्राप्त करने के लिये प्रेरित करता है। अनन्त और अक्षय सुख एकमात्र मोक्ष में ही है। सचेष्ट होकर प्रत्येक जीवात्मा इसे प्राप्त कर सकता है। जीवनमुक्त महापुरुष जीवन में ही शाश्वत शान्ति और मोक्ष का परमानन्द प्राप्त करते हैं। भारत के ऋषियों ने शारीरिक, मानसिक तथा आत्मोन्नति को ही इस उद्देश्य की पूर्ति का साधन बतलाया है। युगादि में ही शारीरिक शक्ति के विकास के लिये ऐसा नियम और इस प्रकार का जीवन बनाया गया था, जिसमें मानसिक और आत्मविकास में भी बाधा न पड़े। शरीर के विभिन्न अंगों को पुष्ट करने के लिये व्यायाम, यम, नियम, आसन, प्राणायाम, ध्यान आदि का विधान किया गया है। ये साधन शारीरिक उन्नति के साथ–साथ चंचल चित्त–वृत्तियों का निरोध कर मनुष्य को एकाग्र बनाते और आत्मोन्नति में सहायता प्रदान करते हैं। प्राणायाम से शारीरिक, मानसिक शक्ति के विकास में सहायता मिलती है। ब्रह्मचर्य से जीवनीशक्ति की वृद्धि होती है तथा वह आगे क्रम से आत्मप्राप्ति तक सहायक होता है।

भारतीय ऋषियों ने यह दिव्य ज्ञान प्राप्त किया कि सत्य और ऋत् (जीवन की सुव्यवस्था) के आधार पर ही यह सृष्टि स्थित है। ये दोनों विश्व के मूल कारण हैं। तभी से सत्याचरण का भाव इस विश्व के वातावरण में फैल गया है। भारतीय संस्कृति ने चरित्र बल को धर्म की कसौटी माना है। इस कसौटी पर जो सफल हुआ, उसे भारत आदर और गौरव की दृष्टि से देखता आया है, भले ही उसकी विचारधारा सर्वमान्य और सर्वप्रिय न हो। इससे यह भी स्पष्ट है कि भारत में अनादिकाल से धार्मिक स्वतंत्रता रही है। मनुष्य के आदर और प्रतिष्ठा का मापदण्ड ईश्वर की भक्ति और वेदादि सद्ग्रन्थों का अनुशीलन न होकर ऋत्–चरित्र पर रहा है, जो भारतीय संस्कृति की दूसरी विशेषता है।

'सर्वजनसुखाय' की भावना भारत में आदिकाल से प्रबल रही है। भारतीय संस्कृति की इस आधारशिला रूप भावना पर भारतीय जीवन और भव्य भवन अडिग और अचल खड़ा हुआ है। इस उदार, उदात्त और सर्वोच्च अभिलाषा के कारण ही आर्य–संस्कृति की मौलिक महत्ता है। आर्यपुरुषों की अभिलाषा केवल अपने को ही नहीं, वरन संपूर्ण विश्व को सुखी और शान्त बनाने में पूरी होती है–

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग्भवेत्।।

सर्वजनसुखाय की सद्भावना तो चरम सीमा पर तब पहुँच जाती है, जब ऋषि दधीचि–जैसे महान् तपस्वी जनकल्याण के लिये अपने जीवन का विसर्जन सहर्ष स्वीकार कर लेते हैं। दधीचि ने यह कहकर अपना शरीर जनकल्याण के लिये अर्पित किया कि जब एक दिन यह स्वयं ही मुझे छोड़ने वाला है, तब इसको पाल कर क्या करना है। जो मनुष्य इस विनाशी शरीर से दुःखी प्राणियों पर दया करके मुख्य धर्म और लौकिक यश का सम्पादन नहीं करता, वह जड़ पेड़–पौधों से भी गया बीता है। बड़े–बड़े ऋषियों, महात्माओं ने इस अविनाशी धर्म का पालन किया है और उसकी उपासना की है। इसका स्वरूप बस इतना ही है कि मनुष्य किसी प्राणी के दुःख में दुःख का और सुख में सुख का अनुभव करे।

स्वयं मुक्त होकर यदि और किसी को मुक्त न कर सके तो अपनी मुक्ति की सार्थकता कहाँ! वस्तुतः यदि आत्मा एक ही सत्य है तो क्या यह सत्य नहीं है कि जब तक अन्य

दूसरे जीव पूर्णत्व लाभ नहीं कर लें, तब तक वास्तव में किसी भी आत्मा का पूर्णत्व लाभ नहीं हो सकता। भारत के सभी महापुरुष इसकी घोषणा कर गये हैं कि समस्त विश्व का कल्याण हो और आत्मकल्याण के लिये मानवजाति सचेष्ट हो। विश्वकल्याण और आत्मकल्याण–दोनों एक और अभिन्न हैं। इस प्रकार प्रज्ञावान्, पूर्णकाम मानव के सम्मुख उसकी तपस्या और निष्ठा पर मुग्ध होकर जब स्वर्गाधिपति वरदान देने के लिये आये तो महामानव राजा रन्तिदेव के मुख से सहसा निकला–

न त्वहं कामये राज्यं न स्वर्गे नापुनर्भवम्।
कामये दु:खतप्तानां प्राणिनामार्तिनाशनम्।।
कश्चास्य स्यादुपायोऽत्र येनाहं दु:खितात्मनाम्।
अन्त:प्रविश्य भूतानां भवेयं दु:खभाक् सदा।।

इस प्रकार मानव–कल्याण की कामना के सामने आये हुए ऐश्वर्य तथा मुक्ति को भी ठुकराना भारतीय संस्कृति के लिये ही सम्भव था। यह है इसकी सर्वश्रेष्ठ विशेषता और अपनी इन समस्त विशेषताओं के आधार पर प्राणी मात्र को वह पुरुष से पुरुषोत्तम तथा नर से नरोत्तम बनने के लिये धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष के अनुसार प्रेरित करती है। इन चारों पुरुषार्थों का समन्वय और साधन कर्म से होता है। कर्म के माध्यम से धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की साधना ही पुरुषार्थ है। पुरुषार्थ आवश्यक है, क्योंकि मानव जीवन का उद्देश्य केवल पुरुष ही बने रहना नहीं है। मानव–जीवन का उद्देश्य है–मानवी स्तर से मानवीयता की ओर अग्रसर होना। इसका तात्पर्य है–पुरुष से पुरुषोत्तम और नर से नरोत्तम होना। इस साधना में व्यक्ति और समाज दोनों का समन्वय आवश्यक है; क्योंकि पुरुष से पुरुषोत्तम बनने की प्रक्रिया में व्यक्ति और समाज एक दूसरे के पूरक हैं। व्यक्ति से समाज की साधना होती है और समाज से व्यक्ति की; बशर्ते दोनों के सम्बन्धों का प्रणयन धर्म से हो। समाज के रंग–मंच पर व्यक्ति का जीवन एक संक्रमण–प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया की कुछ आधारभूत अवस्थाएँ (आश्रय) हैं, जिनका साधन पुरुषार्थ के लिये आवश्यक है; क्योंकि ये अवस्थाएँ मानव की शरीरी तथा स्वाभाविक अभिरुचियों का एक सहज परिणाम है। अत: व्यक्ति अपने गुण तथा कर्मों के कारण ही समाज तथा धर्म से बँधता है और इसी कारण पुरुषार्थ की साधना का तात्पर्य है गुण–कर्म के अनुसार समाज में धर्मप्रणीत वैयक्तिक जीवन को अपनाने का प्रयास करना।

इस प्रयास का समयानुसार विकास वेदों, संहिताओं, ब्राह्मणों, आरण्यकों, उपनिषदों, सूत्रों, स्मृतियों, महाकाव्यों, नीतिशास्त्रों तथा पुराणों और नाटक, काव्य तथा जनसाहित्य में हुआ है। इस प्रकार भारतीय संस्कृति तथा जीवन के प्रति हिन्दू दृष्टिकोण कुछ धारणाओं में निहित हैं। ये धारणाएँ हैं, चारों पुरुषार्थ, कर्म–सिद्धान्त और वर्णाश्रम–व्यवस्था। इन्हीं धारणाओं ने हिन्दू–समाज तथा संस्कृति को उसकी विशेषताएँ प्रदान की हैं। ये धारणाएँ किसी भी रूप में निरपेक्ष नहीं हैं, सापेक्ष हैं–व्यक्ति की मानसिक तथा सामाजिक आवश्यकताओं के अनुसार देश–काल की परिस्थितियों से। युग–युग की आवश्यकताओं के अनुसार इन धारणाओं के संवर्धन और प्रतिपादन में ही हिन्दुत्व का विकास निहित है। यह बतलाने की आवश्यकता नहीं है कि भारतीय संस्कृति की मूल भित्ति सनातन–धर्म है। वेदों में बीज रूप में, धर्मशास्त्र में पल्लवित, प्रस्फुटित और पुराणादि में पुष्पित और फलित रूप में इस धर्म का ही दिव्य दर्शन होता है। यही कारण है कि भारत के कण–कण में सनातन धर्म का भव्य भाव भरा हुआ है। सनातन धर्म भारतीय संस्कृति की पुरस्कृति है।

सदाचार ही सुख और संपत्ति देता है। सदाचार से ही यश बढता है और आयु बढती है। सदाचार धारण करने से सब प्रकार की कुरूपता का नाश होता है।

– डॉ. रामचन्द्र 'महेन्द्र'

अपनी बात

मनुष्य के जीवन में द्वन्द्व बना रहता है। मनुष्य जैसा होना चाहिए, वैसा नहीं है। उसके जीवन में एक तरफ पशुओं का जगत है तो एक तरफ परमात्मा का। बीच में अटका हुआ है मनुष्य-न यहाँ का न वहाँ का। अगर वह वासनाओं की सुने तो वासनाएँ पशुओं में खींच ले जाती हैं। अगर वह विवेक की सुने तो परमात्मा की तरफ उठता है विवेक।

मनुष्य के भीतर दोनों हैं-विवेक और वासना। वासना पीछे की तरफ खींचती है, विवेक आगे की तरफ खींचता है। खींचा हुआ मनुष्य द्वन्द्व के भर जाता है। उसको समझ नहीं पड़ती कि पीछे जाऊँ या आगे जाऊँ। आगे जाता है तो जो मन पीछे जाना चाहता है वह अड़चन पैदा करता है। पीछे जाता है तो जो भाव आगे जाना चाहता है वह अड़चन डालता है।

व्यक्ति जब किसी प्रकार का नशा करता है तो उसके अन्दर मन का ऐसा हिस्सा है जो प्रसन्न होता है। व्यक्ति का प्रमाद, उसकी मूर्च्छा प्रसन्न होती है। लेकिन व्यक्ति का विवेक, उसकी चेतना दुखी होती है। ध्यान करने यदि मनुष्य बैठता है तो उसकी चेतना प्रसन्न होती है, उसका विवेक प्रसन्न होता है। लेकिन तब वासना दुखी होती है। वासना कहती है-क्यों समय खराब कर रहे हो, कुछ और करने को नहीं है क्या? क्यों बैठे हो यहाँ शाखा में आकर? यहाँ रखा क्या है? खेलना ही हो तो बहुत खेल हैं यहाँ से साफ सुथरे, यहाँ मिट्टी में क्यों भर रहे हो? संघ के कार्यक्रमों में जो समय गंवा रहे हो, उतने समय में पढने बैठते तो परीक्षा की अच्छी तैयारी होती। इतनी देर कुछ कमाई करने में लगाते तो कुछ अर्जित ही करते, यहाँ क्या पा लिया? यह हमारा प्रमाद, हमारी वासना कहती है।

मनुष्य में द्वन्द्व है, क्योंकि मनुष्य में दो तत्त्व हैं-प्रकृति और परमात्मा। क्योंकि मनुष्य में दो जगत का मेल है- शरीर और आत्मा। अदृश्य और दृश्य का मिलन हो रहा है मनुष्य के जीवन में। मनुष्य सीमा पर खड़ा है। एक तरफ प्रकृति खींचती है, एक तरफ परमात्मा बुलाता है। यह मनुष्य के लिये बड़ी चुनौती है। मनुष्य अगर सिर्फ परमात्मा ही परमात्मा होता तो उसके जीवन में कोई द्वन्द्व नहीं होता। परम अवस्था में यह द्वन्द्व मिट जाता है क्योंकि मनुष्य परमात्मा ही परमात्मा हो जाता है। और यदि निम्नतम अवस्था में पहुँच जाए तो भी द्वन्द्व मिट जाता है। तब मनुष्य प्रकृति ही प्रकृति रह जाता है। जहाँ प्रकृति और परमात्मा, इन दोनों में से केवल एक बचता है, वहाँ द्वन्द्व मिट जाता है।

चार्वाक कहता है-'कोई परमात्मा नहीं, कोई विवेक नहीं, कोई प्रार्थना नहीं। डूबे रहो प्रकृति में। यावद जीवेत् सुखंम जीवेत, ऋणं कृत्वा घृतं पीवेत। ऋण लेकर भी सुविधाएँ जुटानी पड़े तो जुटाओ। कोई चिन्ता की बात नहीं, क्योंकि मरने के बाद न कोई बचता है, न कोई पाप है न कोई पुण्य है। न मरने के बाद कुछ लेना है न देना है। न कोई ऋण है, न कोई भुगतान। आदमी सिर्फ शरीर है।' यह स्थिति भी अद्वैतवाद जैसी है पर है निम्नतम अद्वैतवाद। चार्वाक जिस सुख की बात करता है, वह मूर्च्छित सुख है। दूसरा सुख है परिपूर्ण जागृति का, तब अंतर्तम आलोक से भर जाता है। जीवन में चैतन्य का प्रादुर्भाव हो जाता है, तब भी द्वन्द्व मिट जाता है। संघ की साधना इस चैतन्य का प्रादुर्भाव करने की साधना है। मनुष्य जीवन में बड़ी महिमा छिपी हुई है। उस महिमा को प्रकट करना ही जीवन की सार्थकता है। इस साधना में द्वन्द्व रहेगा पर निरंतर प्रवाह बना रहे तो द्वन्द्व समाप्ति की राह पकड़ लेता है। ●

अदम्य साहस के धनी झाला मान (बीदाजी)

जन्मः- 15 मई, 1542 ई. (ज्येष्ठ शुक्ल द्वितीया सोमवार, वि. सं. 1599)

राजतिलकः- अश्विन शुक्ला दशमी (विजया दशमी), गुरुवार, विक्रम संवत 1625 (31 सितम्बर, 1568 ई.)

आत्मोत्सर्गः- 18 जून, 1576 ई. (ज्येष्ठ (शुद्ध) शुक्ल सप्तमी सोमवार, वि. सं. 1633)

ठा .पुष्पेन्द्र सिंह झाला, कुं. भूपेन्द्र सिंह झाला, कुं. दिलीप सिंह झाला,कुं. हेमेंद्र सिंह झाला, भ. पुष्पराज सिंह झाला, कुं. ऋतुराज सिंह झाला, कुं. सूरज भान सिंह झाला, कुं. जयव्रत सिंह झाला , कुं. ध्रुवराज सिंह झाला, कुं. महेंद्र सिंह झाला

ठिकाना - भगोर, ऋषभदेव, उदयपुर

महाराणा प्रताप

की जयंती पर

कोटि-कोटि नमन

महाराणा प्रताप

सोमवार 22 मई, 2023

श्री जय अंबे स्वयं सेवक संघ

श्री जय अंबे स्वयं सेवक संघ
स्थापना :- २१/०४/१९९०

-: श्री जय अंबे स्वयं सेवक संघ के कार्य :-

✦ साइकल स्कीम ✦ 700 सभ्य की बचत स्कीम ✦ व्यसन मुक्ति
✦ कुरिवाज का त्याग ✦ अंध श्रद्धा को दूर करना ✦ प्राथमिक कक्षा के बालकों के लिए हर साल फ्री में नोटबुक और जरूरी सामग्री देना
✦ इनाम वितरण ✦ दशहरा महोत्सव ✦ महाराणा प्रताप जयंती महोत्सव
✦ गांव की प्राथमिक स्कूल में कंप्यूटर लेब निशुल्क बालकों के लिए

देवेंद्रसिंह, घनश्यामसिंह
अध्यक्ष

सिद्धराजसिंह, अनिरुद्धसिंह
उपाध्यक्ष

हशपालसिंह, जयदीपसिंह
उपाध्यक्ष

यशराजसिंह, तजवितसिंह
मंत्री

हिरेन्द्रसिंह जटुभा
संगठन मंत्री

मित्राजसिंह, नवलसिंह
संगठन मंत्री

महावीरसिंह, महेंद्रसिंह
छात्र पुरस्कार वितरण - समन्वयक

भगीरथसिंह, किशोरसिंह
छात्र पुरस्कार वितरण - समन्वयक

रामदेवसिंह नारुभा
महाराणा प्रताप वर्षगांठ - समन्वयक

शक्तिसिंह, राजेन्द्रसिंह
महाराणा प्रताप जयंती - सह संयोजक

सिद्धराजसिंह, जयेंद्र सिंह
दशहरा महोत्सव समन्वयक

युवराजसिंह, महेंद्रसिंह
दशहरा पर्व - सह संयोजक

जून, सन् 2023
वर्ष : 60, अंक : 06

समाचार पत्र पंजी.संख्या R.N.7127/60
डाक पंजीयन संख्या - Jaipur City /411/2023-25

संघशक्ति

ए-8, तारानगर, झोटवाड़ा,
जयपुर-302012
दूरभाष : 0141-2466353

E-mail : sanghshakti@gmail.com
Website : www.shrikys.org

श्रीमान्...

....

....

स्वत्वाधिकारी श्री संघशक्ति प्रकाशन प्रन्यास के लिये, मुद्रक व प्रकाशक, लक्ष्मणसिंह द्वारा ए-8, तारानगर, झोटवाड़ा, जयपुर से : गजेन्द्र प्रिन्टर्स, जैन मन्दिर सांगाकान, सांगों का रास्ता, किशनपोल बाजार, जयपुर फोन : 2313462 में मुद्रित। सम्पादक-लक्ष्मणसिंह